

THE
PADYARACHANÂ
OF
LAKSHMANA BHATTA
ÂNKOLAKARA.

EDITED BY

PANDITA KEDÂRANÂTHA

SON OF

MAHÂMAHOPÂDHYÂYA PANDITA DURGÂPRASÂDA

AND

WÂSUDEVA LAXMANA SHÂSTRÎ PAÑASHÎKAR.

PRINTED AND PUBLISHED

BY

TUKÂRÂM JÂVAJÎ,

PROPRIETOR OF JÂVAJÎ DÂDÂJÎ'S "NIRNAYA-SÂGARA" PRESS.

BOMBAY.

1908.

Price 12 Annas.

(Registered according to act XXV of 1867.)

(All rights reserved by the Publisher.)

आङ्गोलकरश्रीलक्ष्मणभट्टविरचिता

पद्यरचना ।

जयपुरमहाराजाश्रितेन महामहोपाध्यायपण्डितश्रीदुर्गाप्रसाद-
तनयेन पण्डितकेदारनाथेन, मुम्बापुरवासिना पणशी-
करोपाङ्गलक्ष्मणतनुजनुपा वासुदेवशर्मणा च
संशोधिता ।

सा च

मुम्बय्यां निर्णयसागराख्ययन्त्रालये तदधिपतिना मुद्राक्षरैरङ्कयित्वा
प्राकाश्यं नीता ।

१९०८

(अस्य ग्रन्थस्य पुनर्मुद्रणादिविषये सर्वथा निर्णयसागरमुद्रायन्त्रालयाधिपते-
रेवाधिकारः ।)

मूल्यमेको ॥ पादोनरूप्यकः ।

आङ्गोलकरश्रीलक्ष्मणभट्टः ।



आङ्गोलकरोपनामकः श्रीलक्ष्मणभट्टः कदा समुत्पन्न इति प्रमाणानुपलम्भात् शक्यते निर्णेतुम्; परं नायमेकसाद्वर्षशतकादर्वाचीन इति शक्यते वक्तुम् । यदाधारेणास्याः पद्यरचनाया मुद्रणं जातं तत्पुस्तकद्वयमपि शताद्वयेभ्यः प्राचीनेषु पत्रेषु लिखितमिति । कविरयं जाल्या महाराष्ट्रो भवेत् ।

(१) पद्यरचनायाः पुस्तकमेकं मान्यवराणां मुम्यापुरप्रान्तीयशिक्षाविभागाध्यक्षाणा-
मनुज्ञया पुण्यपत्तनस्थदक्षिणपाठशालायां संस्कृतसाहित्यस्य प्रधानाध्यापकैर्विद्वद्वारेण्य
श्री के. बी. पाठकमहोदयैः सानुकम्पमस्तत्सविधे प्रेषितं प्रायः शुद्धम् ।

(२) अपरं च जयपुरराजगुरुकैलासवाशि श्रीरूपदत्तमहोदयानां पुस्तकालयत
उपलब्धं नितान्तमशुद्धम् ।

ग्रन्थेऽस्मिन् संगृहीतानि च बहूनि पद्यानि काव्यमालासहकारिसंपादकानां कै० पं०
श्रीकाशीनाथपरब्रह्महोदयानां सुभाषितरत्नभाण्डागारस्य साहाय्येन संशोधितानि ।

संस्कृतसाहित्योन्नतये समर्पितजीवितानां श्री के. बी. पाठकमहोदयानामुपकार-
गौरवं च शिरसा वहन्तस्तेषां चिरकृतज्ञाः स्मः ।

पद्यरचनायां येषां कवीनां पद्यानि सनामनिर्देशं संगृहीतानि तेषां नामान्यत्र संगृह्यन्ते ।
इन्द्रकविः, उमापत्युपाध्यायः, अचलः, अमरकः, अम्बष्ठः, अवन्तिवर्मा, अविलम्बः,
आनन्दवर्धनः, भर्तृहरिः, बाबूमिश्रः, कविकङ्कणः, कविराजः, कालिदासः, अकबरीय-
कालिदासः (?) कृष्णमिश्रः, गणपतिः, यदाधरः, गुणाकरः, जयदेवः, जघनचपला,
त्रिविक्रमः, दण्डी, देवेश्वरः, धरणीधरः, नारायणः, निद्रादतिद्विः, परिमलः, पाणिनिः,
विहङ्गः, भानुकरः, भानुमिश्रः, भासः, भोजदेवः, (भोजप्रबन्धः), महादेवः, (महा-
नाटकम्) माघः, मैथिलः, मोरिका, रघुपतिः, रत्ननाथः, रत्नाकरः, रामचन्द्रः, लक्ष्मणः,
लक्ष्मणठक्करः, लक्ष्मणसेनः, लीलावतीकारः, वररुचिः, वराहमिहिरः, वामनः, वाणी-
विलासः, वाल्मीकिः, वाहिनीपतिः, विकटनितम्बा (वैष्णोसंहारनाटकम्), वैद्यभानुः,
श्रीव्यासः, शाकशब्दिः, शङ्कराचार्यः, शार्ङ्गधरः, श्रीहर्षः, पाण्मासिकः, सुचन्धुः, हरिहरः,
हर्षदत्तश्चेति ।

केदारनाथवासुदेवशर्माणौ

काव्यमालासंपादकौ ।

पद्यरचनाया विषयानुक्रमः ।



| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------------|--------|---------|
| प्रथमो व्यापारः— | | |
| १ मङ्गलाचरणादि | १ | १—५ |
| २ अष्टावताराः— | | |
| तेषु मत्स्यः | १ | ६ |
| कूर्मः | २ | ७—८ |
| वराहः | २ | ९—१० |
| नृसिंहः | २ | ११—१२ |
| वामनः | ३ | १३ |
| भार्गवो रामः | ३ | १४—१६ |
| दाशरथी रामः | ३ | १७—१९ |
| हली रामः | ४ | २०—२१ |
| धृष्टः | ४ | २२ |
| कृष्णः | ५ | २४ |
| (कृष्णस्य धाम्यम्) | ५ | २५ |
| ३ ईश्वरः | ५ | २६—२८ |
| ४ शम्भोत्पाण्डवम् | ६ | २९ |
| ५ गणेशः | ६ | ३०—३१ |
| ६ कार्तिकेयः | ६ | ३२—३३ |
| ७ भवानी | ६ | ३४—३८ |
| ८ लक्ष्मीः | ७ | ३९—४१ |
| ९ गङ्गा | ८ | ४२—४३ |
| १० मणिकर्णा | ८ | ४४—४६ |
| ११ यमुना | ९ | ४७ |

इति प्रथमो व्यापारः ।

द्वितीयो व्यापारः—

| | | |
|-------------------------------|----|------|
| १२ विषयसूचना | ९ | १ |
| १३ कीर्तिः | ९ | २—१६ |
| १४ द्विपत्कीर्तिः | १२ | १७ |
| १५ शौर्योदयप्रधाना कीर्तिः | १२ | १८ |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|------------------|--------|---------|
| १६ प्रतापः | १२ | १९—२६ |
| १७ कीर्तिप्रतापो | १४ | २७—२९ |
| १८ दानम् | १४ | ३०—३७ |
| १९ विदायः | १५ | ३८—३९ |

इति द्वितीयो व्यापारः ।

अथ तृतीयो व्यापारः—

| | | |
|----------------------------------|----|-------|
| २० राजवर्णनम् | १६ | १—४ |
| २१ सौन्दर्यप्रधाना नृपस्तुतिः | १७ | ५—८ |
| २२ धरित्रीपतिवात्रा | १७ | ९—१६ |
| २३ पताका | १९ | १७—१८ |
| २४ तुरङ्गः | १९ | १९—२३ |
| २५ कृपाणः | २० | २४—२७ |
| २६ वीरवाक्यम् | २१ | २८—३२ |
| २७ रणः | २२ | ३३—४१ |
| २८ रणभग्नेऽपदशा | २३ | ४२—४३ |
| २९ रणक्षितिः ; | २३ | ४४—४८ |
| ३० अरिपलायनम् | २४ | ४९—५४ |
| ३१ अरिनारी | २५ | ५५—६६ |
| ३२ अरिदम्पती | २७ | ६७ |
| ३३ अरिनिग्रमम् | २८ | ६८—७४ |

इति तृतीयो व्यापारः ।

अथ चतुर्थो व्यापारः—

| | | |
|-----------------|----|-------|
| विषयसूचना | २९ | १ |
| ३४ अथ गृह्यारः— | | |
| कामप्रभावः | २९ | २ |
| बालावर्णनम् | २९ | ३—५ |
| वयःसंधिः | ३९ | ६—१२ |
| तारुण्यम् | ३१ | १३—१७ |

| | श्लोकाः | श्लोकाः |
|------------------------|---------|---------|
| ३५ अथ बालावयववर्णनम्— | | |
| तन्त्र, केशपादाः ३१ | १८—१९ | |
| सीमन्तसिन्दूरम् ३२ | २० | |
| भालसिन्दूरम् ३२ | २१ | |
| अलकाः ३२ | २२ | |
| आननम् ३२ | २३—२४ | |
| भ्रुवौ ३३ | २६—२८ | |
| नयनौ ३३ | २९—३१ | |
| अपाङ्गः ३४ | ३२—३५ | |
| नासामौक्तिकम् ३४ | ३६—३७ | |
| कर्णताटङ्गम् ३५ | ३८—३९ | |
| अधरः ३५ | ४० | |
| बाहू ३५ | ४३—४४ | |
| अङ्गुल्यः ३६ | ४५ | |
| स्तनी ३६ | ४६ | |
| हारः ३६ | ४९ | |
| मध्यः ३६ | ५०—५४ | |
| रोमावली ३७ | ५५—६१ | |
| अघनम् ३८ | ६२ | |
| ऊरू ३८ | ६३ | |
| पादौ ३८ | ६४ | |
| ३६ इतस्ततो वर्णनम् ३९ | ६५—६७ | |
| इति चतुर्थो व्यापारः । | | |
| पञ्चमो व्यापारः— | | |
| ३७ विरहिणीवर्णनम् ३९ | १—२३ | |
| स्मरोपालम्भः ४२ | २४—२५ | |
| इति पञ्चमो व्यापारः । | | |
| अथ षष्ठो व्यापारः— | | |
| ३८ नायकविप्रलम्भः ४३ | १—२० | |
| इति षष्ठो व्यापारः । | | |
| अथ सप्तमो व्यापारः— | | |
| ३९ कुलाग्रना ४६ | २—५ | |
| ४० कुलाग्रनाद्योः ४७ | ६—७ | |

| | श्लोकाः | श्लोकाः |
|-------------------------|---------|---------|
| ४१ प्रोष्यत्वपिका ४७ | ८—१२ | |
| ४२ प्रोषितपिका ४८ | १३—१४ | |
| ४३ उत्कृष्टिता ४८ | १५—१६ | |
| ४४ अधाग्रनावान्तरभेदाः— | | |
| तन्त्र, नवोदा ४९ | १७—१९ | |
| विद्यन्धनवोदा ४९ | २१—२२ | |
| मुग्धा ५० | २३ | |
| मध्या ५० | २५ | |
| प्रोढा ५० | २५ | |
| असती ५० | २६ | |
| विदग्धासती ५० | २७ | |
| गुप्तासती ५१ | २९ | |
| लक्षितासती ५१ | ३० | |
| वेद्या ५१ | ३१ | |
| कुलटा ५१ | ३२—३६ | |
| कुलटोपदेशः ५२ | ३७—४१ | |
| इति सप्तमो व्यापारः । | | |
| अष्टमो व्यापारः— | | |
| सौन्दर्यगर्विता ५३ | १ | |
| श्रेयगर्विता ५३ | २ | |
| राण्डिता ५३ | ३ | |
| कलहान्तरिता ५३ | ४—६ | |
| ४५ दूती ५४ | ७—९ | |
| ४६ द्युपहासः ५४ | १०—१२ | |
| ४७ मानिनीमानः ५५ | १३—१४ | |
| ४८ मानापनोदः ५५ | १५ | |
| ४९ अथ परस्परप्रीति— | | |
| प्रलापः ५५ | १६ | |
| तन्त्र, नायिकायाः— | | |
| नायकस्य ५५ | १७ | |
| ५० रतप्रवेशा ५६ | १९ | |
| ५१ रतारम्भः ५६ | २०—२१ | |
| ५२ रतम् ५७ | २५—२१ | |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|--------------|--------|---------|
| ५३ विपरीतम् | ५८ | ३२—३८ |
| ५४ रतावसानम् | ५९ | ३९—४० |
| ५५ रताशसनम् | ५९ | ४२ |
| ५६ रतनिद्रा | ५९ | ४३ |

इत्यष्टमो व्यापारः ।

अथ नवमो व्यापारः—

| | | |
|----------------------|----|-------|
| ५७ प्रभातानुनयः | ६० | १—२ |
| ५८ वायुः | ६० | ३—९ |
| ५९ प्रभातम् | ६१ | १०—१७ |
| ६० मध्याह्नः | ६२ | १८—२३ |
| ६१ जलक्रीडा | ६३ | २४—२८ |
| ६२ वनक्रीडा | ६४ | २९—३३ |
| ६३ भ्रमरीवृक्षक्रीडा | ६४ | ३४—३८ |
| ६४ कन्दुकक्रीडा | ६४ | ३९—४१ |
| ६५ दृक्पीलनक्रीडा | ६६ | ४२—४३ |
| ६६ हिन्दोलक्रीडा | ६६ | ४४—४६ |
| ६७ संध्या | ६७ | ४७—५० |
| ६८ अन्धकारः | ६७ | ५१—५२ |
| ६९ अभिसारिका | ६७ | ५३—५८ |

इति नवमो व्यापारः ।

अथ दशमो व्यापारः—

| | | |
|------------------|----|-------|
| ७० चक्रवाकावस्था | ६८ | १—२ |
| ७१ तारावर्णनम् | ६९ | ३—७ |
| ७२ चन्द्रः | ७० | ८—१० |
| ७३ सकलचन्द्रः | ७० | १३—१८ |
| ७४ हर्म्यम् | ७१ | १९—२३ |

इति दशमो व्यापारः ।

अथैकादशो व्यापारः—

| | | |
|------------------|----|-----|
| ७५ विषयसूचनम् | ७२ | १ |
| ७६ अनुकूलो नायकः | ७२ | २—४ |
| ७७ दक्षिणनायकः | ७३ | ५—७ |
| ७८ पृथो नायकः | ७३ | ८—९ |
| ७९ धूर्तो नायकः | ७३ | १० |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------|--------|---------|
| ८० मानी नायकः | ७४ | ११ |
| ८१ अनभिज्ञो नायकः | ७४ | १२—१३ |
| ८२ शिशुनायकः | ७४ | १४—१६ |
| ८३ वृद्धनायकः | ७४ | १७—१८ |
| ८४ विदग्धनायकः | ७५ | १९ |
| ८५ देशान्तरोपगत- | | |

नायकः ७५ २०—२२

८६ अथ षट्पदवर्णनम्—

| | | |
|-----------------|----|-------|
| तत्र, वर्षर्तुः | ७५ | २३ |
| जलधरः | ७५ | २४—२७ |
| घनदुर्दिनम् | ७६ | २८ |
| घनगर्जितम् | ७६ | ३१—३३ |
| विद्युत् | ७७ | ३४—३५ |
| वर्षाविहारिणी | ७७ | ३६ |
| खद्योतः | ७७ | ३७—३८ |
| हंसः | ७७ | ४० |

इत्येकादशो व्यापारः ।

अथ द्वादशो व्यापारः—

| | | |
|------------|----|-------|
| शरत् | ७८ | १—९ |
| हेमन्तः | ७९ | १०—१८ |
| शिशिरः | ८० | १९—२३ |
| वसन्तसंधिः | ८१ | २४—२९ |
| वसन्तः | ८२ | ३०—३४ |
| ग्रीष्मः | ८२ | ३५—४१ |

इति द्वादशो व्यापारः ।

अथ त्रयोदशो व्यापारः—

| | | |
|--------------|----|-------|
| ८७ हास्यरसः | ८३ | १—५ |
| ८८ करुणरसः | ८४ | ६—१४ |
| ८९ रौद्ररसः | ८५ | १५—१८ |
| ९० वीररसः | ८६ | १९ |
| ९१ भयानकरसः | ८६ | २०—२१ |
| ९२ बीमत्सरसः | ८७ | २२—२३ |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|--------------|--------|---------|
| ९३ अद्भुतरसः | ८७ | २४ |
| अत्युक्तिः | ८७ | २५—२६ |
| ९४ शान्तरसः | ८७ | २७—६८ |

इति त्रयोदशो व्यापारः ।

अथ चतुर्दशो व्यापारः—

| | | |
|-----------------|-----|-------|
| ९५ कल्पद्रुमः | ९३ | २—३ |
| ९६ चम्पकः | ९३ | ४—६ |
| ९७ केसरतरुः | ९३ | ७ |
| ९८ बाणुरः | ९४ | ८—९ |
| ९९ आम्रः | ९४ | १०—१२ |
| १०० शङ्खा | ९४ | १३—१४ |
| १०१ पलाशः | ९४ | १५—१६ |
| १०२ तालः | ९५ | १७ |
| १०३ वृक्षः | ९५ | १८—२१ |
| १०४ कमलिनी | ९६ | २२—२३ |
| १०५ कुमुद्वती | ९६ | २४—२५ |
| १०६ भृङ्गः | ९६ | २६—३२ |
| १०७ पिङ्गः | ९७ | ३३—३६ |
| १०८ चातकः | ९८ | ३५—३६ |
| १०९ शुकः | ९८ | ३७—४० |
| ११० हस्तः | ९९ | ४१—४२ |
| १११ समुद्रः | ९९ | ४३—४७ |
| ११२ तडागः | १०० | ४८—४९ |
| ११३ गिरिनिर्झरः | १०० | ५०—५१ |
| ११४ जलम् | १०० | ५२ |
| ११५ कूपः | १०१ | ५३—५४ |
| ११६ महीधरः | १०१ | ५५—५६ |
| ११७ केसरी | १०१ | ५७—६१ |
| ११८ गजः | १०२ | ६२—७० |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|----------------------|--------|---------|
| ११९ मृगः | १०३ | ७१ |
| १२० मेघः | १०३ | ७२—८० |
| १२१ वायुः | १०५ | ८१—८२ |
| १२२ चन्द्रान्यापदेशः | १०५ | ८३—८६ |
| १२३ रवेरन्यापदेशः | १०५ | ८७—९० |

इति चतुर्दशो व्यापारः ।

अथ पञ्चदशो व्यापारः—

| | | |
|-------------------|-----------|-------|
| १२४ समस्यापूतयः | १०६ | १—२६ |
| १२५ बहिस्रापिकाः | १०९ | २७ |
| १२६ चित्रकाव्यम् | ११०—२८—२९ | |
| १२७ सखनः | ११० | ३० |
| १२८ उदारः | ११० | ३१—३२ |
| १२९ प्रशंसा | ११० | ३३—२४ |
| १३० संसर्गप्रशंसा | १११ | ३५—३९ |
| १३१ धनस्तुतिः | १११ | ४०—४६ |
| १३२ कृपणः | ११२ | ४७—५१ |
| १३३ अर्षी | ११३ | ५२ |
| १३४ दरिद्रः | ११३ | ५३—५६ |
| १३५ खलः | ११३ | ५७—६० |
| १३६ क्रुपुत्रः | ११४ | ६१ |
| १३७ कापुरुषः | ११४ | ६२—६४ |
| १३८ कर्कशः | ११५ | ६५—६६ |
| १४० पण्डितः | ११५ | ६७—६८ |
| १४१ मुनिः | ११५ | ६९ |
| १४२ तपोवनम् | ११५ | ७०—७३ |
| १४३ महावनम् | ११६ | ७४ |
| १४४ मृगया | ११६ | ७५—८० |
| काव्यप्रशंसा | ११६ | ८०—९३ |

इति पञ्चदशो व्यापारः ।

काव्यमाला ।

आङ्गोलकरश्रीमल्लक्ष्मणभट्टविरचिता

पद्यरचना ।

वक्राम्भोरुहपञ्चकं विकचयन्नेत्रत्रयं दर्शयँ-

लालाटं दहनं स्फुटं प्रकटयंस्तोयं कचैर्मोचयन् ।

बालं चन्द्रमुदञ्चयन्विरचयन्द्राक्ताण्डवाडम्बरा-

नाश्चर्याणि निदर्शयज्जगदयं पायान्नटो धूर्जटिः ॥ १ ॥

कवित्वप्रौढुम्फश्रवणकृतज्ञम्पव्यतिकरं

चिरं येषां स्वान्तं समजनि नितान्तं रसवशम् ।

अमीषां पीयूषापचितसुरयोपाधरपुटो-

लसन्माधुर्ये वा समुदयति किं वा रतिरपि ॥ २ ॥

तर्कज्ञानां तर्कशास्त्रार्कसंपत्संपर्केण क्लिद्यमानान्तराणाम् ।

विश्रान्त्यर्थं संगता कल्पशाखिच्छायेवेयं निर्मितिल्क्ष्मणस्य ॥ ३ ॥

विज्ञास्तु विज्ञाप्यमिदं पुराणपद्येषु किं चर्वितचर्वणेन ।

यद्यस्ति कौतूहलमीक्षणीया क्षणं कृतिः संप्रति लक्ष्मणीया ॥ ४ ॥

प्राज्ञाः कापि प्रतिज्ञापि तथा वै करवै यथा ।

बुधा अपि सुधास्वादं लभन्ते विबुधा इव ॥ ५ ॥

(ममैव लक्ष्मणस्य)

अथावतारेषु मत्स्यः ।

पुच्छं चेदहमुत्क्षिपाम्यनवधिस्तुच्छीमचेदम्बुधिः

क्रीडां चेत्कलये मनागपि जले पीडा परं यादसाम् ।

निःस्यन्दो भृशमत्र निर्भरमरब्रह्माण्डभाण्डक्षय-

क्षोभात्कुञ्चितवेष एष भगवान्प्रीणातु मीनाकृतिः ॥ ६ ॥

अथ कूर्मः—

पायान्मायाजरठकमठाधीश्वरो ब्रह्मनित्या-

धिष्ठानोच्चैर्मठ इव महान्पत्तने पन्नगानाम् ।

धत्ते धन्या यदुपरि घरा शेषशीर्षोपितासौ

कन्दोन्मीलन्नवकमलिनीकाण्डपत्रस्य लक्ष्मीम् ॥ ७ ॥

हृग्भ्यां यस्य विलोकनाय जगतो द्रागीपदुत्तोलित-

ग्रीवाग्रोपरि विस्फुरद्ब्रह्मणे छत्रायितायां भुवि ।

हा धिग्भूः किमभूदमूतदितरत्किं वेति पर्याकुलो

हन्यादेप हठादधानि कमठाधीशः कठोराणि मे ॥ ८ ॥

अथ वराहः—

यस्यालीढमृणालतन्तुवदियं दन्तोपरि स्वर्धुनी

दृकोणोपितद्रूपिके इव नभसेतौ विवस्वद्विधू ।

किञ्च क्षिग्धसटाग्रलम्बनलिनीपत्राभमेतन्नभः

सोऽयं कोलकलेवरः कलयतां कल्याणमव्याहतम् ॥ ९ ॥

(रामचन्द्रस्यैते)

भूयादेप सतां हिताय भगवान्कोलावतारो हरिः

सिन्धोः क्लेशमपास्य यस्य दशनप्रान्ते नटन्या भुवः ।

तारा हारति वारिदस्तिलकति स्वर्वाहिनी मात्यति

क्रीडादर्पणति क्षपापतिरहर्देवश्च ताटङ्कति ॥ १० ॥

(भानुकरस्य)

अथ नृसिंहः—

आहादयत्वेप स्वरैर्नखाग्रैर्देतेयवक्षःस्त्रिमुत्खननवः ।

प्रहादहृद्यं हृदये द्वितीयमन्वेष्टुमिच्छन्निव सूनुरत्नम् ॥ ११ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पायान्मायागृगेन्द्रो जगदसिलमसौ यत्तनूदधदार्चि-

ज्वालाजालावलीढं यत भुवि सकलं व्याकुलं किं न भूयात् ।

न स्याच्चेदाशु तस्याधिकविकटसटाकोटिभिः पाव(त्र्य)माना-
दिन्दोरानन्दकन्दाच्चदुपरि तुहिनासारसंदोहवृष्टिः ॥ १२ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अथ वामनः—

किं क्रमिष्यति किलैष वामनो यावदित्यमहसन्त दानवाः ।
तावदस्य न ममौ नमस्यले लङ्घितार्कशशिमण्डलः क्रमः ॥ १३ ॥
(माघस्य)

अथ भार्गवो रामः—

रामे ब्राह्मणवेषधारिणि धनुर्धृत्वा कराम्भोरुहे
संजन्याङ्गुलिकास्रमारचयितुं कैलासमार्कयति ।
तात त्राहि सुत प्रयाहि दयिते निर्याहि सौधाद्वहि-
र्वारं वारमयं पुरान्तकपुरक्षोभः शिवायास्तु वः ॥ १४ ॥
(मानुकरस्य)

नाशिष्यः किमभूद्भवः किमभवन्नापुत्रिणी रेणुका
नासीद्विश्वमकार्मुकं किमिति सा प्रीणातु रामप्रभा ।
विप्राणां प्रतिमन्दिरं मणिगणोन्मिश्राणि दण्डाहते-
नाब्धीशः समया यमोऽपि महिषेणाग्भांसि नोद्वाहितः ॥ १५ ॥
द्वारे कल्पतरुनृहेषु सुरर्मांश्चिन्तामणीनङ्गदे
पीयूषं सरसीषु वक्रकुहरे विद्याश्चतस्रो दश ।
यः किं कर्तुमयं तपस्यति भृगोर्वशावतंसो मुनिः
पायाद्वोऽवनिदेवपालनपरो भूदेवमूषामणिः ॥ १६ ॥
(महानाटकात्)

अथ दाशरथी रामः—

अधिपञ्चवटीकुटीरवर्ति स्फुटितेन्दीवरमुन्दरोरुमूर्ति ।
अपि लक्ष्मणलोचनैकलक्ष्यं भजत ब्रह्म सरोरुहायताश्रम् ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

बालक्रीडनमिन्दुशेखरधनुर्भङ्गावधि प्रहृता-

नेकैतद्वनसेवनावधि कृपा मुग्रीवसख्यावधि ।

आज्ञा वारिधिवन्धनावधि यशो लङ्केशनाशावधि

श्रीरामस्य पुनातु लोकवशता जानक्युपेक्षावधि ॥ १८ ॥

(कस्यापि)

नियमितपाथोनिधिना प्रत्यावृत्तेन रामचन्द्रेण ।

अथ लङ्घिताः पदाम्ब्यां सरितो भयवामनीभूताः ॥ १९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ हली रामः—

निष्पात्याशु हिमांशुमण्डलमधः पीत्वा तदन्तःसुधां

कृत्वैनं चपकं हसन्निति हलापानाय कौतूहलात् ।

भो देव द्विजराजि मादृशि सुरास्पर्शोऽपि न ध्वेसे

मा मुञ्चेति तदर्धितो हलधरः पायादपायाज्जगत् ॥ २० ॥

क्रीडन्नद्यानवद्यामहमुपरि गदां आमयित्वा जगत्यां

निष्पात्याकाशमुर्वीमुडुशशिदिनकृद्भारमुर्वी विधास्ये ।

यद्वा मद्वात्यलीलोत्तरलतरह्लाघातनिर्भिन्नभूमी-

निर्यत्पातालगद्गोज्ज्वलबहलजलैः प्लावयिष्यामि विश्वम् ॥ २१ ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

अथ युद्धः—

मायाबुद्धकुतूहले भगवति व्यालोलयत्यागमा-

नोङ्करेण भयातुरेण चलितं बिन्दुं विहाय क्वचित् ।

ओकारः करपञ्जरं पुरभिदो भेजे त्रिशूलच्छला-

द्विन्दुश्चक्रमिषेण कैटमरिपोस्तस्थौ कराम्भोरुहे ॥ २२ ॥

अथ फल्की—

यवनीनयनान्बुधोरणीभिर्धरणीनामपनीय तापवद्दीन् ।

सुकृतदुमसेकमाचरन्तं घृतकल्कं प्रणमामि निर्विकल्पम् ॥ २३ ॥

अथ कृष्णः—

कमलाकुचकनकाचलजलधरमाभीरसुन्दरीमदनम् ।

अधिततशेषफणावलिकमलवनीभृङ्गमच्युतं वन्दे ॥ २४ ॥

अथ कृष्णस्य वाम्यम्—

कृत्वा सिंहकलेवरं विरचयन्स्वेदातुरान्कुञ्जरा-

न्वारार्हीं तनुमेत्य लोलदलकान्विद्रावयन्गोपकान् ।

धृत्वा मत्स्यवपुस्तडागकुहरे कल्लोलमान्दोलय-

न्कृष्णः दैशवविग्रहं विरचयँल्लभे भ्रमन्विभ्रमान् ॥ २५ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथेश्वरः—

स्तब्धेऽर्धाङ्गे चरणपतनं नैव वामस्य पाणे-

र्यैमत्येनाञ्जलिविरचनं नापि वाचां प्रपञ्चः ।

अंशे जिह्वाकृपजडतया मानवत्यां मृडान्यां

कोऽन्यः कल्पोऽहानुनयविधावर्धनारीश्वरेऽभूत् ॥ २६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

मल्लीमाल्यधिया मुधाकरकलां कण्ठश्रियं कञ्जल-

भ्रान्त्या भालविलोचनानलशिखां सिन्दूरपूराशया ।

कैलासे प्रतिविम्बितात्स्ववपुषो गृह्णन्सन्त्या मुहुः

पार्वत्याः प्रतिकर्मकर्मणि चिरं मुग्धो हरः पातु वः ॥ २७ ॥

(गणपतेः)

ओंकारो यस्य कन्दः सलिलमुपनिषद्यायजालं मृणालं

ब्रह्माण्डं यस्य काण्डं प्रसरति परितो यस्य यागः परागः ।

भृङ्गध्यानः.....(?) विजनमुरधुनीतीखासोऽधिवासो

यस्यानन्दो मरन्दः पुरहरचरणाम्भोरुहं तद्भजामः ॥ २८ ॥

(भानुकरस्य)

अथ शम्भोस्ताण्डवम्—

चञ्चल्या दहति क्षतक्षितिचलच्चक्षुःश्रवःसंहति-

। त्रस्यद्विषपतिदिग्गजप्लुतिपराधःशेषनश्यद्रति ।

दोर्दण्डाहतिसंततिच्युटदुरुन्नहाण्डभाण्डस्थिति-

त्रस्तस्वर्पतिसंभ्रमन्नति मवस्यास्तां मुदे ताण्डवम् ॥ २९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ गणेशः—

विघ्नेशः सर्वविघ्नान्परिहरतु स यत्कर्णतालादुदञ्च-

द्वायुज्याधूतगण्डस्यलयुगलगलद्भूरिसिन्दूरपूरैः ।

आरुण्याद्वैतमावं गतवति जगति कापि नो भाति भानु-

नैवासौ शीतभानुः कचिदपि नितरां भासते वा कृशानुः ॥ ३० ॥

(लक्ष्मणस्य)

क्रोडं तातस्य गच्छन्विशदविसधिया शाबकं शीतभानो-

राकर्ष्यन्भालवैश्वानरनिशितशिखाशोचिषा तप्यमानः ।

गङ्गाम्भः पातुमिच्छुर्भुजगपतिफणाफूत्कृतैर्दूयमानो

मात्रा संव्रोध्य नीतो दुरितमपनयेद्भालवेषो गणेशः ॥ ३१ ॥

अथ कार्तिकेयः—

मूर्ध्नो मन्मथशासितुर्विगलिते क्षीराशयास्वादिते

यक्त्रे बालतुषारभासि परितः कण्ठोदरे तिष्ठति ।

शेषं वीक्ष्य विलोलशोणनयनं भिलाघरौष्ठश्रियं

व्यातन्वन्करतालिकां विहसितं बालो विशाखो दधौ ॥ ३२ ॥

शृङ्गे शिरीषमालां कण्ठे घण्टां पदेषु मञ्जीरम् ।

विन्यस्य प्रतिमवनं भर्गवृषं ग्रामयामास ॥ ३३ ॥

(भानुमिश्रस्यैतौ)

अथ भवानी—

स्खलितं करकङ्कणं निशायामथ शर्वेण भुजङ्गनिर्मितं तत् ।

उपसि प्रविलोक्य भीतवत्या भगवत्याः करधूननं घ्नोतु ॥ ३४ ॥

दरिद्रजनरञ्जनस्तव भवानि दृक्सञ्जनः

स चेदभिमुखो भवेत्स न भवेत्किमेवं जनः । .

पयोधरतटीभरालसनमद्वधूटीलस-

न्मणिद्युतिविदीपिताम्बरतटीमहीमण्डलः ॥ ३५ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

हरिपत्राम्बकां फुल्लनलास्यां कुन्तिगामिनीम् ।

केतुवाराचितां दार्क्षीं घनकूचयुजं भजे ॥ ३६ ॥

वन्देऽहं कालिकामष्टभुजव्यूहवृतां शिवाम् ।

विध्यादिसुरसन्दोहैर्वन्दितां सुपमाम्बकाम् ॥ ३७ ॥

(एतौ भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

यदेतल्लावण्यं भगवति भवप्रेमलहरि

त्वदीयाङ्गेरस्मात्पथि सह रजोभिर्विगलति ।

विनिर्मातुं ज्ञातकृतवपुरपङ्केरुमुखी-

स्तदुञ्छव्यापारैरपहरति मन्ये कमलभूः ॥ ३८ ॥

(भानुकरस्य)

अथ लक्ष्मीः—

आख्याते हसितं पितामह इति त्रस्तं कपालीति च

व्यावृत्तं गुरुरित्ययं दहन इत्याविष्कृता भीरुता ।

पौलोमीपतिरित्यसूयितमथ व्रीडाविनम्रं श्रिया

पायाद्वः पुरुषोत्तमोऽयमिति यो न्यस्तः सपुष्पाञ्जलिः ॥ ३९ ॥

(क्षेमेन्द्रस्य)

शिरो व्याधुन्वत्यास्तव जननि सिन्दूरकणिका

निकामं दृक्पद्मे पतति किमतः पश्यसि न माम् ।

रतारम्भे किंतु प्रचलमणिकेयूरमुखरं

हरन्वक्षोपासः स खलु कृतकृत्यो मधुरिपुः ॥ ४० ॥

(भानुकरस्य)

पद्मायास्तनहेमसद्गनि मणिश्रेणीसमाकर्षके

किञ्चित्कम्बुकसंधिसंनिधिमिते शौरेः करे तस्करे ।

सद्यो जागृहि जागृहीति वलयध्वानैर्ध्रुवं जाग्रता

कामेन प्रतिबोधिताः प्रहरिका रोमाङ्कुराः पान्तु वः ॥ ४१ ॥

(कस्यापि)

अथ गङ्गा—

इयं चिद्रूपापि प्रकटजलरूपा भगवती

यदीयाम्भोबिन्दुर्वितरति च शम्भोरपि पदम् ।

पुनाना धुन्वाना निखिलमपि नानाविधमधं

जगत्कृत्स्नं पायादनुदिनमपायात्सुरधुनी ॥ ४२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

जडता जडतामम्य पङ्कः पङ्कं व्यपोहतु ।

आन्तिस्तव मम आन्तिमधोगतिरधोगतिम् ॥ ४३ ॥

(कस्यापि)

अथ मणिकर्णी—

अमुक्तां भूयन्तु स्वां तनुं संसारसिन्धुगैः ।

मणिकर्णी ताम्रपर्णी मुक्तिमुक्ताफलैर्जनाः ॥ ४४ ॥

(लक्ष्मणस्य)

स्नातं यारिषु निर्मलेषु जटिलो जातः पुनः कुन्तलः

काये क्षालितमेव पङ्कपटलं कण्ठे पुनः कालिमा ।

उद्दामाः खलु वीचयः परिचितः क्रान्तः करो भस्मना

मातः श्रीमणिकर्णि कर्णपरुषं जल्पामि कोऽयं क्रमः ॥ ४५ ॥

मूर्ध्नः शीतरुचः फलां विसधिया व्यालोलमालोकते

कण्ठे नीलमपाकरोति सलिलैर्जम्बालजालभ्रमान् ।

भूयः प्रोन्धति कुन्तलम्वलदयां धाराधिया मूर्ध्नी-

मन्योन्यं मणिकर्णि कौतुकमिदं निर्मज्ज निर्गच्छता ॥ ४६ ॥

अथ यमुना—

ऊरीकर्तुं तुहिनकिरणप्रीतिधारामुदारां

दूरीकर्तुं दिनकरकरक्लेशबाधामगाधाम् ।

यस्याः पुण्ये पयसि विशति स्नातुकामा त्रियामा

प्रायस्तस्यास्तिमिरततिभिः श्यामलं नीरमस्याः ॥ ४७ ॥

(भानुकरस्यैते)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां प्रथमो व्यापारः ॥ १ ॥

द्वितीयो व्यापारः ।

अथानवद्यपद्येषु प्रतिपाद्यस्य कीर्तये ।

तत्पद्यकर्तृकीर्त्यै च कीर्त्यन्ते तानि कौतुकात् ॥ १ ॥

अथ कीर्तिः—

आभात्येतद्विचन्द्रं वियदपि निखिलं हन्ति(दन्ति)नस्तु त्रिदन्ता

गङ्गापूरश्चतुर्धा प्रविलसति लसत्पञ्चदन्तः करीन्द्रः ।

पङ्कजः (सप्तवक्रः) परिणमति तथा पङ्कजाः सप्तसंख्याः

शङ्के त्वत्कीर्तिमूर्त्या नवमिव जगदालक्ष्यते क्षोणिपाल ॥ २ ॥

दुग्धाम्भोधेः परिचुलुकनं संपिघातुं मुधाया-

त्लासः मुत्रामगजमहसामातपत्रस्य मित्रम् ।

भङ्गो गङ्गाचपलपयसां तन्द्रिका चन्द्रिकाया-

स्त्वत्कीर्तिः सा जयति जगति क्षमापतीनां रतीश ॥ ३ ॥

पाद्यं दुग्धाम्बुधिरपि मुधानर्घ्यमर्घं तथैता-

स्ताराहारास्तनुमलयजं चन्दनं चन्द्रिकैव ।

इन्दोर्विम्बं रुचिरमुकुरः स्वर्गतेति श्रुताया-

स्तत्त्वत्कीर्तिरुपहृतमिदं स्वःपयि स्वर्वधूभिः ॥ ४ ॥

दुग्धाम्भोधावगाधे विहरति मुधया क्षालयत्यङ्घ्रियुग्मं

कृत्स्नां ज्योत्स्नां दुकूलं कलयति मलयोद्भूतचर्चा तनोति ।

स्वच्छन्दं नृत्यति द्रागुरगपतिशिरसेव निद्राति चन्द्रे

त्वत्कीर्तिः स्वामिनीव त्रिजगति विहरत्येवमुर्वीश गुर्वी ॥ ५ ॥

देव त्वघशसा सितांशुमहसा गीर्वाणवृन्देऽस्तिलं

शंभोर्भावमवापिते तु सहसा चेत्कौतुकं तच्छृणु !

साकृताः सकुतूहलाः सचकिताः सौत्कण्ठिताः साह्रुताः

साशङ्काश्च मुहुर्मुहुर्मधुरिपौ लक्ष्म्या दृशः पातिताः ॥ ६ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

मन्येऽरण्ये कुलगिरिगुहागहरे पर्यटन्ती

विद्धा दर्भैः किमपि चरणे वामुदेयस्य कीर्तिः ।

इन्दौ कुन्दे कुमुदमुकुले चामरे चन्दने वा

दत्त्वा (दत्त्वा) मृदुनि पुरतः पादमेपा प्रयाति ॥ ७ ॥

(गणपतेः)

विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठ प्रतिभट्टदमन श्रीनिजाम प्रतीमः

कृत्वा त्वत्कीर्तिगाथां वहति गणविधिं पद्मयोनिः कठिन्या ।

वक्त्रा लेखा गुरूणाममृतकरकलमम्बुमल्लीमरालाः

शुद्धा लेखा लघूनां विसमुजगनभोनिजगा दन्तिदन्ताः ॥ ८ ॥

(भानुफरस्य)

वाणीकण्ठाभरण भवतो रुद्रचन्द्र क्षितीन्दोः

कुन्दस्फीते यशसि नभसो बिम्बमालोकयन्त्यः ।

त्वद्वैरिण्यो विरहविकला वक्षसि न्यस्तकामा

पा(वा)रं वा(रं) भवकमलिनीपत्रबुद्ध्या मृशन्ति ॥ ९ ॥

(रामचन्द्रस्य)

राजेति क्षणदाकरं विजयते दानोरुलक्ष्मीरिति

स्वर्नागं बहुवाहिनीपतिरिति क्षीरोदमास्कन्दति ।

दुर्गोधीश इति स्फुटं पुररिपुं विद्वेष्टि भोगोद्भट-

थीरित्यर्दति वामुकिं स्वयशसा दिलीन्द्रचूडामणिः ॥ १० ॥

(धरणीधरस्य)

प्रतिनगरमटन्ती प्रत्यगारं व्रजन्ती
प्रतिनरपतिवक्षःकण्ठपीठे लुठन्ती ।

गिरिगरिमनितम्बाच्छादने सावधाना

तदपि च तव कीर्तिनिर्मलैवेति चित्रम् ॥ ११ ॥

(कस्यापि)

वीरक्षीरसमुद्रसान्द्रलहरीलावण्यलक्ष्मीमुप-

स्त्वत्कीर्तिस्तुलनां कलङ्कमलिनो घत्तां कथं चन्द्रमाः ।

स्यादेवं त्वदरातिसौधशिखरप्रोद्भूतदूर्वाङ्कुर-

ग्रासासक्तमतिः पतेद्यदि पुनस्तस्याङ्कशायी मृगः ॥ १२ ॥

आन्त्या भूवलयं दशास्यदमन त्वत्कीर्तिहंसी दिवं

याता ब्रह्ममरालसंगमवशाद्या तत्र गुर्विण्यभूत् ।

पश्य स्वर्गतरङ्गिणीपरिसरे कुन्दावदातं तथा

मुक्तं भाति विशालमण्डकमिदं शीतद्युतेर्मण्डलम् ॥ १३ ॥

(महानाटकात्)

लुङ्गब्रह्माण्डसिंहासनमिदमुदयचित्रमध्यास्य नित्यं

न्यञ्चद्विल्यस्रवन्तीसितचमरचयं लालयन्दिग्वधूभिः ।

राकाचन्द्रातपत्रं दिनकरमुकुरं ग्राहयँल्लोकपाला-

न्निर्जित्यैन्द्रं करीन्द्रं तव जयति यशश्चक्रवर्तीबिघेल ॥ १४ ॥

(अकबरीयकालिदासस्य)

यस्य क्षोणिपतेर्विहायसि यशोराशौ चमत्कुर्वति

द्राक्पूर्वरजोभ्रमेण वणिजो वीथीमुपस्कुर्वते ।

चञ्चुं चञ्चलयन्ति चन्द्रकिरणआन्त्या चकोराः पयो-

मुच्या व्योम्नि नियोजयन्ति कलशीमानीय वामभ्रुवः ॥ १५ ॥

(कस्यापि)

राजन्नचण्डरुचिमण्डलपुण्डरीका

दिग्दन्तिवक्रविचरन्नवदन्तिनका ।

उद्बुद्ध.....नीरधिवुद्बुदाली

कल्लोलिनीव तव वल्गति मह्यकीर्तिः ॥ १६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ द्विपत्कीर्तिः—

रघुतिलकनृपाल त्वद्विपत्क्षोणिपाल-

प्रविलसदपकीर्तिरयामले, विश्वजाले ।

भगवति भजमाने कृष्णतां शूलपाणौ

किमुदधिगिरिपुत्र्यौ चक्रतुस्तत्र विप्रः ॥ १७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ शौर्यादार्यप्रधाना कीर्तिः—

लभं रागादृताङ्गचा सुदृढमिह ययैवासियष्टचारिकण्ठे

मातङ्गानामपीहोपरि परपुरुषैर्या पतन्ती च दृष्टा ।

तत्सक्तोऽयं न किञ्चिद्गणयति विदितं तेऽस्तु तेनास्मि दत्ता

भृत्येभ्यः श्रीनियोगाद्गदितुमिति गतेवाम्बुधि यस्य कीर्तिः ॥ १८ ॥

कस्यापि । (हर्षदत्तस्य)

अथ प्रतापः—

अये नृपतिमण्डलीमुकुटरत्न युष्मद्भुजा-

महोष्मततिसंजुषा भव भवप्रतापार्चिषा ।

द्विषामतिभृशं यशःप्रकटपारदोध्मापना-

दुदुस्फुटत तारकाः कपटतो विहायस्तटे ॥ १९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

क्षोणीपर्यटनव्रते क्षितिपते युष्मत्प्रतापो अम-

त्सौराष्ट्रे मगधे कलिङ्गसविधे चङ्गे यदङ्गे गतः ।

तत्पापं परिहर्तुमम्बरमणिव्याजेन सप्तार्णवे

सात्वा विष्णुपदं स्पृशन्नपि भृशं भूयः परिभ्राम्यति ॥ २० ॥

(कस्यापि)

अध्यायोधनवेदि मार्गणकुशानास्तीर्य खड्गसुचा

हुत्वारेः पललं चरुं हविरसृक् तन्मस्तकस्वस्तिकैः ।

संवेष्टाहवनीयमानसदसिष्योऽसौ प्रतापानलो-

ऽस्यापि द्रागुदकाञ्जलीकृतचतुःपाथोधिना श्रीमता ॥ २१ ॥

(धरणीधरस्य)

येनोद्गधास्त्वदरिनिकराद्रेंधनव्रातकात्सं-

भूतो धूमो गगनमसितत्वं निनायावलक्षम् ।

भूमिम्बाहस्कर नरपते हारिसिंह त्वदीयो-

ऽनन्तापीठे खलु विजयते स प्रतापकृशानुः ॥ २२ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

लङ्काधामनि वीर भानुनृपतेः प्रेक्ष्य प्रतापोदयं

प्रत्यागारमधीरनीरजदृशो मूयो हुताशम्रमात् ।

क्षुभ्यद्वाणि विधूतपाणि विगलन्मुक्तामणि प्रस्खल-

द्वाप्पश्रेणि विलोलवेणि दयितं कण्ठस्थले विभ्रति ॥ २३ ॥

क्षोणीकाम निजामशाह भवतः प्रौढैः प्रतापानलै-

र्द्रागेव द्रवरूपतामुपगते चामीकराणां चये ।

अश्यद्वासवधामधोरणि मुहुर्मज्जद्ब्रह्मामणि

त्रस्यत्कामिनि निप्पतद्वनितलं मेरोः समुन्मीलति ॥ २४ ॥

त्वत्प्रतापानलज्वालादग्धं दुग्धोदधिं पुनः ।

नास्वादयति विस्वादमगस्त्यो विस्तृताञ्जलिः ॥ २५ ॥

(पते भानुकरस्य)

कूर्मः पादोऽत्र यष्टिर्भुजगपतिरसौ भाजनं भूतघात्री

तैलापूराः समुद्राः कनकगिरिरयं वृत्तवर्तिप्ररोहः ।

ज्योतिश्चण्डांशुरोचिर्गगनमलिनिमा कज्जलं दक्षमानाः

शत्रुश्रेणीपतङ्गा ज्वलति रघुपते त्वत्प्रतापप्रदीपः ॥ २६ ॥

(महानाटकात्)

अथ कीर्तिप्रतापौ—

क्षितिप किमपि चित्रं जागरूकेऽपि युष्म-
द्यशसि शशिकदम्बे त्वत्प्रतापेऽर्कबिम्बे ।

नयनकुचलयानि त्वद्विषत्कामिनीना-

मपि च वदनपद्मान्याशु यत्संकुचन्ति ॥ २७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

त्वत्प्रतापार्कबिम्बेनासद्येन विकचीकृता ।

कीर्तिस्ते भाति विगतालिंगजाङ्घ्रौ पद्मिनी ॥ २८ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलयातिशुभ्रं

शोणं नवार्ककिरणप्रसिमप्रतापैः ।

श्यामद्युति द्विपदकीर्तिमसीभिरित्थं .

चित्रं तदाम्बरमराजत दिग्बधूनाम् ॥ २९ ॥

(अम्बष्ठस्य)

अथ दानम्—

देव क्षोणितलधिपे त्वयि महादानप्रधाने विधौ

चेतः कुर्वति पातयत्यपि दृशं स्वर्णादिके वस्तुनि ।

विप्राणामतिघोरधारकठिनद्योतत्कुठारोद्यता-

पातप्रस्फुटिताङ्गसंधिचकितो मेरुः परं दूयते ॥ ३० ॥

अन्यार्थमङ्गीकृतवारिषाणौ विशङ्कमानस्तव दानवारि ।

परस्परं दीनमुखा न के वा देवाः सुमेरुं शुशुचुः स्वभूमिम् ॥ ३१ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

दाने द्राघीयसि कपटतः स्वस्तटिन्याः कठिन्या-

.....तव कृतवता.....गारभितौ ।

नापि प्रापि कचिदपि.....श्रीनिजामद्वितीय-

स्तेनाकारि स्थगितमनसा बेधसा बिन्दुरिन्दुः ॥ ३२ ॥

यशःकिरणधोरणीतुलितरोहिणीवल्लभ

त्वया क्षणमुदीक्ष्यते जगति यो दरिद्रो जनः ।

पयोधरमहीधरे नटति तस्य वामभ्रुवां

रणत्कनककिङ्किणीकलरवेण देवस्मरः ॥ ३३ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

म्लायद्वक्त्ररुचः कदन्नकणिकाकुक्षिभरा भिक्षवो

ये केचित्क्षितिकामरामनृपतेः पु.....दृशो गोचराः ।

तत्तत्कान्तकुटुम्बिनीश्रुतिनटत्ताटङ्करत्नाङ्कुर-

ज्योत्स्नाभिर्जटिलीभवन्ति मुचने का वा न दिग्भित्तयः ॥ ३४ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अनेन सर्वार्थिकृतार्थता कृता हृतार्थितौ कामगवीसुरद्वमौ ।

मिथः पयःसेचनपल्लवाशने प्रदाय दानव्यसनं समाप्नुतः ॥ ३५ ॥

(श्रीहर्षस्य)

देव त्वत्करनीरदे दिशि दिवि प्रारब्धपुण्योन्नतौ

चञ्चत्कङ्कणरत्नराजि तडिति स्वर्णामृतं वर्षति ।

स्फीता कीर्तितरङ्गिणी समभवत्तृप्ता गुणग्रामभूः

पूर्णं चार्धिसरः शशाम विदुषां दारिद्र्यदावानलः ॥ ३६ ॥

(महानाटकात्)

त्वया वीरगुणारुष्टा ऋजुदृष्टा विलोकिताः ।

लक्ष्यं लब्ध्वैव गच्छन्ति मार्गणा इव मार्गणैः ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

अथ विदायः—

लक्ष्मीविभ्रमकुञ्जकल्पविटपिन्विद्वत्कृपावारिधे

दृष्टिं खेहनिधे निधेहि महतीं दीने दयार्द्रा पुनः ।

अस्मद्वारिनिबद्धसिन्धुरघटान्यालोलकर्णानिलैः

पीयन्तामरविन्दमुन्दरदृशां स्वेदाम्मसां विन्दवः ॥ ३८ ॥

क्रीडामूलं दुकूलं दलितरिपुमहीपालवृन्दं गजेन्द्रं

दत्त्वा तुङ्गं तुरङ्गं विरचय वसुधानाथ तावद्विदायम् ।

युष्मत्सत्कारभाजं दिशि दिशि चकितैः प्रेक्ष्य मामक्षिपातै-

र्वक्षोजाभोगभूमौ विलुठतु पुलकश्रेणिरणेक्षणानाम् ॥ ३९ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

इति श्रीभाडोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां द्वितीयो व्यापारः ॥

तृतीयो व्यापारः ।

अथ राजवर्णनम्—

राजानः शशिभास्करोन्वयभुवः के के न संजज्ञिरे

भर्तारं पुनरेकमेव हि भुवस्त्वां वीर मन्यामहे ।

येनाङ्गं परिमृद्य कुन्तलमयाकृष्य व्युदस्यायतं

चोलं प्राप्य च मध्यदेशमसकृत्काङ्क्षायां करः प्रापितः ॥ १ ॥

(कस्यापि ।)

क्षत्रुनीरजदृशोऽनुधसमाख्यापदेन हरिसिंह नाम ते ।

मोहिता हरिहरीति चक्षते रूपशौर्यबलसंहितैर्गुणैः ॥ २ ॥

(भोगिरूनोर्वेणीदत्तस्य)

कृष्णं समरसतृष्णं दृष्टवतो बिष्टरश्रवसः ।

राजन्यजन्ममूले भुजमूले पुलकमुकुलानि ॥ ३ ॥

क्षोणीकाम निजामशाह विलसत्सिन्दूरकुन्दसजि

स्रष्टा त्वच्चरणं विधाय निदधे वैरिश्चियो मूर्धनि ।

सीमन्तस्य चकास्ति कापि सरणिस्तस्योर्ध्वरेखादयः

सिन्दूरस्य कणा जयन्ति किरणाः कुन्दानि मन्ये नखाः ॥ ४ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

अथ सौन्दर्यप्रधाना नृपस्तुतिः—

गेहे गेहे सुमगसुदृशो रामभद्र क्षितीश

त्वामालिख्य स्वमपि सविधे सस्पृहं भावयन्त्यः ।

तस्मिन्नाकस्मिकमुपनते वल्लभे भीतिभाजः

पौष्पं चापं तव करतले वेपमाना लिखन्ति ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

अयं कामो निजामो वा त्वया किमवधारितम् ।

इति दृष्टिरिव प्रपुं श्रुतिं श्रयति मुमुक्षुवाम् ॥ ६ ॥

सर्वं लुण्ठितमुद्गटैस्तव भटैस्तेन द्विपत्सुभ्रुव-

स्त्राणाय त्वयि योजिताञ्जलिपुटं काकूकिमातन्वते ।

त्राणं दूरत एव तिष्ठतु मनस्तासां त्वया लुण्ठितं

तद्गम्भीर वदामि कुप्यसि न चेत्साधोरयं कः क्रमः ॥ ७ ॥

अलसं वपुषि श्लथं दुकूले चपलं चेतसि धूसरं कपोले ।

चकितं नयने स्तने विलोलं तव नामश्रवणं तनूदरीणाम् ॥ ८ ॥

(एते भानुकरस्य)

अथ धरित्रीपतियात्रा—

चोली चोलीं न तु कलयते गुर्जरी जर्जराङ्गी

भूर्जाक्रान्ता विगति विपिनं मालवी सालवीधीम् ।

नो संगीतं रचयति मनागङ्ग वङ्गी कृशाङ्गी

नाङ्गी रागं रहसि तनुते भूपते त्वत्प्रयाणे ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

जाने युष्मत्प्रयाणे श्रितितिलक रजोयोगदोषादशेषा

दिग्गोपाः श्रान्ति सद्यस्त्वदरिन्पवधूनेत्रनीरापणाम् ।

संगम्य त्वत्प्रतापैस्तदनु किमुद्धर्षो दोहदं देव तासां

प्राची प्रातः प्रसूते यदियंमुरुमहोऽखण्डमार्तण्डविम्बम् ॥ १० ॥

(रामचन्द्रस्य)

देव त्वद्विजये तुरङ्गमश्वरथातक्षतक्षमातला-

त्पोद्भूतिने रजसः परागपटले दिक्चक्रमाक्रामति ।

अक्ष्णां पङ्क्तिशतानि निन्दति निजं हस्तद्वयं निन्दति

स्वां निन्दत्यनिमेषतां परिषतद्वाप्साम्बुधारो हरिः ॥ ११ ॥

(महानाटकात्)

त्वद्याने बाजिराजिप्रस्वरस्वरपुटोद्धूतधूलीतमिले

लुण्टाकेभ्यो भियेव स्फुटमुपनयते गौसहस्रं दिवस्थान् ।

गोपायन्ति द्रुतं स्वं चलयमपि दिशो न क्षमापि क्षमाम्-

त्स्यातुं वा गन्तुमुर्वीतिलक वसुमती केवलं क्षम्यते स्म ॥ १२ ॥

(महाकाव्ये)

फाञ्ची फाञ्ची न धत्ते कलयति न दृष्ट्वा केरली केलितरुपं

सिन्दूरं दूर एव क्षिपति करतलन्यस्तमान्ध्री पुरन्ध्री ।

सौराष्ट्री मार्ष्टि भूयः सपदि नयनयो रक्तयो रक्तिमानं

कर्णाटी कर्णिकायां भलिनयति मनो मानसिंहप्रमाणे ॥ १३ ॥

(कस्यापि)

बाहव्यूहखुरक्षतां वसुमतीं संवीक्ष्य मूर्ध्निवर्ती

मेरी भाङ्गतिचञ्चलेन पयसा वारान्निधिः सिञ्चति ।

दिग्बाला तनुते निजामनृपतेर्वीर्यं पताकांशुकै-

र्धूलीधोरणिरधिनीमुतमिव प्रष्टुं दिवं धावति ॥ १४ ॥

वेष्टस्पक्षतिराजहंसयुवतिब्रुवन्मृणालावलि-

आग्न्यत्पदपदमूरिभाङ्गति पतच्चक्रीकृतकेङ्कति ।

पर्यस्यन्नवपद्मसंहतिपृथग्दिग्यतिवेगस्थिति-

प्रस्थानध्वजवातलोलमजनि स्वर्गापगायाः पयः ॥ १५ ॥

मेरीभाङ्गतिभिस्तुरङ्गनिनदैः कुम्भीन्द्रकोलाहलैः

प्रस्थाने तव वीरभान दलितं ब्रह्माण्डभाण्डोदरी ।

आधाय ज्वलति प्रतापदहने रङ्गैः पुनर्वंधसा
तारानायकतारकासुरसरिद्याजादिवायोजितम् ॥ १६ ॥
(भानुकरस्यैते)

अथ पताका—

नृपतिनिजामचमूचरचरणार्पणबहलपीडाभिः ।
रचयति बहिरिव रसनामरुणध्वजकैतवादबनिः ॥ १७ ॥
निजामवसुधाधिपे क्षिपति शोणकोणे दृशौ
रणाङ्गणसमुद्भटैः प्रतिभटैर्विभिन्नीकृतम् ।
वपुर्विपुलचेपथु व्यथितमब्जिनीप्रेयसो
व्रणज्वरविशङ्कया किमु पताकया स्पृश्यते ॥ १८ ॥
(एतौ भानुकरस्यै)

अथ तुरङ्गः—

वातं स्थावरयन्त्रमः पुटकयन्स्रोतस्विनीं सूत्रयन्
सिन्धुं पल्लवलयन्वनं विटपयन्मूषण्डलं लोष्टयन् ।
शैलं सर्पपयन्दिशं द्यणुकयैल्लोकत्रयं क्रोडयन्
हेलारब्धरयो हयस्तव कथंकारं गिरां गोचरः ॥ १९ ॥
मेखलीयति मेदिन्याः ककुभः कङ्कणीयति ।
मण्डलीस्तुरगः कुर्वन्नगतः कुण्डलीयति ॥ २० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

धूलीभिर्दिवमन्धयन्वधिरयन्नाशाः खुराणां रवै-
र्वातं संयति खञ्जयज्जवजयैः स्तोतृन्गुणैर्मूकयन् ।
धर्मोराधनसंनियुक्तजगता राज्ञामुनाधिष्ठितः
सान्द्रोत्फालमिषाद्विगायति पदा स्पृष्टुं तुरङ्गोऽपि गाम् ॥ २१ ॥
(श्रीहर्षस्य)

अलक्षितगतागतेः कुलबधूकटाक्षैरिव
क्षणानुनयशीतलैः प्रणयकेलिकोपैरिव ।

सुवृत्तमसृणोन्नतैर्मृगदृशामुरोजैरिव

त्वदीयतुरगैरिदं धरणिचक्रमाक्रम्यते ॥ २२ ॥

(कस्यापि)

निर्मासं मुखमण्डले परिमितं मध्ये लघुं कर्णयोः

स्कन्धे चन्द्रमप्रमाणमुरसि स्निग्धं च रोमोद्गमे ।

पीनं पश्चिमपार्श्वयोः पृथुतरं पृष्ठे प्रधानं जवे

राजा वाजिनमारुरोह सकलैर्युक्तं प्रशस्तैर्गुणैः ॥ २३ ॥

(त्रिविक्रमस्य)

अथ कृपाणः—

भृशमौलितटीषु दर्शितसमारम्भोऽयमम्भोधर-

स्त्वस्वङ्गः प्रतिपक्षपङ्कपटलं प्रक्षालयन्धारया ।

व्युद्धकुद्विविद्धसिन्धुरदलद्रण्डस्थलप्रस्वल-

न्मुक्ताभिः करकाभिराशु समरक्षोणीतले वर्पति ॥ २४ ॥

(गणपतेः)

वीर त्वत्तङ्गधारानिहतरिपुगणास्तं हिमांशुं विभिद्य

स्वर्गे यान्ति स नूनं विगलितकलुषाः साधुवत्सुण्यलभ्ये ।

यस्मिन्संलक्ष्यते वै विकटमलपदे नावभेदोऽधुनापि

मध्याभ्यालक्ष्यदेवसूतिततविषयो देव भूमिन्वभानो ॥ २५ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

क्षोणीकाम निजाम तावकभुजं लब्ध्वा भुजङ्गेश्वरं

जानीमः करवालकालमुजगी किं नाम गर्भिण्यभूत् ।

यद्विन्नेभकपोललोलविगलन्मुक्ताफलापच्छला-

दच्छामण्डपरम्परामधिरणं सूते स्फुरन्ती मुहुः ॥ २६ ॥

(भानुकरस्य)

हस्ताम्भोजालिमाल्य नस्तयान्निरुचिरश्यामलच्छायवीची

तेजोमेघमधारा नितरणकरिणो गण्डदानप्रणाली ।

वीरश्रीवेणिदण्डो लवणिमसरसीबालशैवालवल्ली
वेहत्यम्भोधरश्रीरकवर धरणीपालपाणौ कृपाणः ॥ २७ ॥
(अकवरीयकालिदासस्य)

अथ वीरवाक्यम्—

अद्यारभ्य कठोरकार्मुकलताविन्यस्तहस्ताम्बुज-
स्तावन्न प्रकटीकरोमि नयने शोणे निमेषोदयान् ।
यावत्सायककोटिपाटितरिपुक्ष्मापालमौलिस्खल-
न्मल्लीमाल्यपतत्परागपटलैरामोदिनी मेदिनी ॥ २८ ॥
नो तावत्कल्यामि केलिकृपणे वामभ्रुवो लोचने
तावन्न प्रणयावलीढमनसः पश्यामि मातुर्मुखम् ।
यावत्तारकुठारपातनिपतत्प्रत्यर्थिगृध्वीपति-
भ्राम्यत्स्वर्णफिरीटवद्धशिरसो भ्राम्यन्ति नो फेरवः ॥ २९ ॥
राकातारापतिरुचिचमत्कारवाचालकीर्ति-
र्वेलोहेलापरिणतगजस्पर्धिदोर्वल्लिखीर्यः ।
एकच्छत्रं भुवनबलयं मेदिनीमेकवीरां
युद्धारम्भे स्मितपरिचितः कौतुकादद्य कुर्याम् ॥ ३० ॥
समरविहरदस्मद्भल्लनिष्पातभिन्न-
प्रतिनरपतिभिन्नाद्वास्वतो बिम्बमध्यात् ।
वयमहह धरायां पातयामः पताका-
वसनपवनलोलं वारि दिव्यापगायाः ॥ ३१ ॥
निष्पीते कलशोद्भवेन जलधौ गौरीपतेर्गङ्गाया
होतुं हन्त ललाटदावदहने यावत्कृतः प्रक्रमः ।
तावत्तत्र मया विपक्षनगरीनारीदृग्भोरुह-
द्वन्द्वप्रस्तलदसवारिपटलैः सृष्टाः पयोगशयः ॥ ३२ ॥
(भानुकरस्य)

अथ रणः—

कृपाणकिरणानलं रुधिरनीरपूरच्छटा-
 अंतालतलसंकुलं भटतिमिङ्गिलैराकुलम् ।
 प्रमथ्य समरार्णवं चरमकार्पिं लक्ष्मीस्त्वया
 विधारमदमन्थरं मथनमन्दरं सिन्धुरम् ॥ ३३ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

भैरैर्भिक्ताः प्रतिनृपतयः शङ्खनादानुदारा-
 ङ्क्षुत्वा राजन्पुनरपि मुजादण्डकण्डूतिमाजः ।
 आलिङ्गन्त्यासिदशमुदशो भ्रूलतां वीक्ष्य मुग्धां
 चापभ्रान्त्या चपलमनसो हस्तमावर्तयन्ति ॥ ३४ ॥
 मिलितमिहिरभासं मौलिमेतस्य दृष्ट्वा
 परवरतनुपादालक्तकं तर्कयन्त्या ।
 त्यदरिधरणिजानिर्भानुबिम्बेन गच्छ-
 न्मुरनगरमृगाक्ष्या वीक्ष्यते साभ्यसूयम् ॥ ३५ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

कोदण्डस्तव हस्तगो हृदि बलत्यर्तिस्तु विद्वेषिणां
 त्वं दाता रभसेन मार्गणगणस्तानेव संसेवते ।
 वीरत्वं तु जयस्य मित्रमनिशं ते यान्ति वैकुण्ठतां
 संग्रामे तव भूपते महदिदं चित्रं समालक्ष्यते ॥ ३६ ॥
 (धरणीधरस्य)

फो दण्डं न ददाति देव भवते फोदण्डमातन्वते
 फो नारातिमुपैति पारमुदधेः फोणारुणे लोचने ।
 फा कुञ्जान्तरमेत्य वैरितरुणी काकुं न वा भाषते
 राजन्गर्जति धारणे तव पुनः फो वा रणे वर्तते ॥ ३७ ॥
 (कस्यापि)

संमूर्छितं संयुगसंप्रहारैः पश्यन्ति सुप्तप्रतिबुद्धकल्कम् ।

आत्मानमङ्केषु सुराङ्गनानां मन्दाकिनीमारुतवीजिताङ्गम् ॥ ३८ ॥

(चराहमिहिरस्य ?)

करवारिरुहेण संधुनाने तरवारिं नृपतौ मुकुन्ददेवे ।

रचयन्त्यमरावतीतरुण्यः प्रथमं काञ्चनपारिजातमालाः ॥ ३९ ॥

(गौडस्य)

परस्परेण क्षतयोः प्रहत्रोरुत्क्रान्तवाय्वोः समकालमेव ।

अमर्त्यभावेऽपि कयोश्चिदासीदेकाप्सरःप्रार्थितयोर्विवादः ॥ ४० ॥

(कालिदासस्य)

ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो युवानः परस्परं सायकविक्षताङ्गाः ।

कुम्भेषु लम्बाः सुपुर्णजानां कुचेषु लम्बा इव कामिनीनाम् ॥ ४१ ॥

(व्यासस्य)

अथ रणभग्नेऽपदशा—

क्षत्रियस्योरसि क्षत्रं पृष्ठे ब्रह्म व्यवस्थितम् ।

तेन पृष्ठे न दातव्यं पृष्ठदो ब्रह्महा भवेत् ॥ ४२ ॥

(श्रीव्यासस्य)

यदि समरमपास्य नास्ति मृत्यो-

र्भयमिति युक्तमितोऽन्यतः प्रयातुम् ।

अथ मरणमवश्यमेव जन्तोः

किमिति मुधा मलिनं यशः क्रियेत ॥ ४३ ॥

(वेणीसंहारे)

अथ रणक्षितिः—

भवत्तुरगनिष्ठुरक्षुरदृढव्रणैराचिता

क्षणात्समरविच्युतप्रतिनृपालवेलाघिता ।

इयं रणधरा भवद्विरददानधाराजलैः

किमु व्रणतलेऽर्पितं वसनपट्टमासिञ्चति ॥ ४४ ॥

युष्मद्दोर्दण्डमण्डल्यवनमितरणचण्डकोदण्डदण्डो-

न्मुक्तेषु च्छिन्नमूर्च्छत्यतिनृपतिमुजाखण्डमुण्डावकीर्णा ।

गायत्रृत्यलवेलेद्रजनिचरवधूदत्तलैः करालै-

र्वेतालैरदृष्टासप्रकटितदशनैर्युद्धभूर्भाति भीमा ॥ ४५ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

रक्तं नक्तंचरौघः पिबति यमति च ग्रस्तकुन्तः शकुन्तः

कव्यं नव्यं गृहीत्वा प्रणदति मुदितो मत्तवेतालबालः ।

क्रीडत्यग्रीडमसिन्धिरमधुवशात्पूतनानूतनाङ्गी

योगिन्यो मांसमेदःप्रमुदितमनसः शूरशक्तिं स्तुवन्ति ॥ ४६ ॥

(कस्यापि)

अन्योन्यास्फालभितद्विपरुधिरयसामांसमस्तिष्कपङ्के

ममानां स्यन्दनानामुपरि कृतपदन्यासविक्रान्तपत्तौ ।

स्त्रीतात्त्वकपानगोष्ठीरसदशिवशिवात्तूर्यनृत्यत्कवन्धे

सद्वामैकार्णवान्तःपयसि विचरितुं पण्डिताः पाण्डुपुत्राः ॥ ४७ ॥

(वेणीसंहारे)

सृष्टाकृष्टासिपिष्टोत्कटकरटिघटाकुम्भकूटावटान्त-

र्निष्ठभूतासूक्तटिन्यास्तटनिकटरणत्कौणपाट्टाट्टासाः ।

श्रीभोज त्वद्रणक्षमाक्षतभटविकटोरःस्थलत्रोटकुप्य-

द्वध्रौषत्रोटिकोटिमकटचटचटाशब्दरौद्रोऽभवद्वाक् ॥ ४८ ॥

(दिवेश्वरस्य)

अधारिपलायनम्—

तादृग्दण्डविवर्तनर्तितमहीचक्रदपाक्रामिताः

क्वापि क्वापि च कण्टकैरुपगता रेखोपरेखाक्रमम् ।

यस्य प्रौढतरप्रतापदहनज्वालाभिरन्ते दिशा-

मापाके निपतन्ति पार्यिवमटाः शीर्यन्ति जीर्यन्ति च ॥ ४९ ॥

त्वदनिरुपतिमाशावाससंधूलिघारा-

धवलमदह मिश्रं वीक्ष्य भर्गभ्रमेण ।

सुरभिरुदधिवेलाकाननं गाहमानो

दिशति कुसुमवाणं दूरतो निर्गमाय ॥ ५० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

नालिङ्गन्ति पयोधरौ भवदिभप्रोतुङ्गकुम्भस्थल-

भ्रान्त्या वेणिलतासु नैव दधति प्रीतिं तवासिभ्रमात् ।

भ्रूभङ्गान्भवदीयदुर्धरधनुर्भ्रान्त्या भजन्ते न ते

वैरिक्षोणिभुजो निजाम्बुजदृशां भूमण्डलाखण्डल ॥ ५१ ॥

(कस्यापि)

क्षणं कान्तारागप्रसरविलसन्मानसरुचिः

क्षणं शैलोत्सङ्गे द्विजकुलरवाकृष्टहृदयः ।

क्षणं पद्मध्वानश्रुतिपुलकितो यद्भयभरा-

द्वसन्प्राप्तोऽरण्ये रिपुरवनिपालस्थितिमिव ॥ ५२ ॥

(वैद्यमानोः)

राजन् द्विषस्ते भयविद्रुतस्य भालस्थलं कण्टकिनो वनान्ताः ।

अद्यापि किं वानुभविष्यतीति व्यपाटयन्द्रष्टुमिवाक्षराणि ॥ ५३ ॥

(कस्यापि)

द्वारं खङ्गिमिरावृतं बहिरपि प्रक्लिन्नगण्डैर्गजै-

रन्तः कञ्चुकिभिः स्फुरन्मणिशिखैरध्यासिता भूमयः ।

आक्रान्तं महिषीभिरेव शयनं त्वद्विद्विषां मन्दिरे

राजन् कर्णं चिरंतनप्रणयिनी शून्येऽपि सैव स्थितिः ॥ ५४ ॥

(कस्यापि)

अधारिनारी—

समस्तावनीनाथमाले भवतः परास्तद्विषः पद्माविस्तारिनेत्रा ।

नितान्तं विहस्ता स्वहस्तारविन्दैर्विषत्ते पुरस्तादुरस्ताडनानि ॥ ५५ ॥

स्फुटतरमटवीनां प्रान्तरे पर्यटन्ती

हरिहतगजकुम्भोन्मुक्तमुक्ताफलानि ॥

परिकल(र)यति हस्ताम्भोजशोणप्रभाभिः

परिहरति च दूरान्मञ्जुगुञ्जाम्रमेण ॥ ५६ ॥

क्षोणीपाल त्वदरिहरिणीलोचना शोचमाना

गुञ्जाहारं कुचकलशयोर्निःश्वसन्ती करोति ।

क्षुब्धक्षीराम्बुधिलहरिसंशोभिर्गुप्सवशोभि-

गैरिं मुक्ताफलमयमिवाविन्दते नन्दते च ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

धीरसिंहारिनारीणामञ्जनाक्ताश्रुविन्दवः ।

उरोजे पतिता रेजुः सरोजे मधुषा इव ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

मुखे हारावाप्तिर्नयनयुगले कङ्कणभरो

नितम्बे पद्माली सतिलकमभूत्पाणियुगलम् ।

अरण्ये श्रीकर्णे त्वदरियुवतीनां विधिवशा-

दपूर्वोऽयं भूषाविधिरहह जातः किमधुना ॥ ५९ ॥

(कस्यापि)

कुरुवक कुन्दाघानक्रीडामुखेन विद्युग्नसे

वकुलविटपिन् मूर्तव्यं ते मुखासवसेचनम् ।

नरणयटनाबन्धो यास्यस्यशोक सशोकता-

मिति निजपुरत्यागे यस्य द्विषां जगदुः स्त्रियः ॥ ६० ॥

(रत्नाकरस्य)

घ्रातं तालपत्राशया स्तनतटं चिम्ब्रम्रमेणाधरो

दष्टः पाकचिदीर्णद्राडिमधियात्नीद्राः स्फुरन्तो रदाः ।

भ्राम्यन्ती ममनिष्ठहानुविपिनं त्वद्वैरिगीमन्तिनी

निद्राणा मुहुगहता मुहुगपि शिवा च शान्वागृभः ॥ ६१ ॥

(कस्यापि)

इतलसद्विदुतभूमृदुज्जिता प्रियाथ दृष्टा वनमानवीजनैः ।

शशंस पृष्टाद्भुतमात्मदेशजं शशित्विपः शीतलशीलतां किल ॥ ६२ ॥

(श्रीहर्षस्य)

प्रस्थानं रतिमन्दिरात्कमलिनीबन्धोरपि प्रेक्षणं

काकुः केलिविधिं विनापि चरणन्यासः पृथिव्यामपि ।

किं च क्लान्तमतालवृन्तपवनः प्रत्यङ्गमालिङ्गति

द्रष्टव्यं किमतोऽपि कृष्णनृपतेः प्रत्यर्थिवामभ्रुवाम् ॥ ६३ ॥

स्वप्नेन क्षितिपावतंस भवतो भीत्या व्रजन्ती वनं

निर्ममा प्रतिपक्षराजरमणी कलोलिनीपाथसि ।

उत्क्षिप्ताननमुन्नतभ्रु चरणव्यासक्तमुक्तालतं

भूयः स्फारितबाहुवल्लि शयनादुद्भ्रान्तमुचिष्ठति ॥ ६४ ॥

मौलिं मानविधिं विना नमयितुं हारं स्वयं गुम्फितुं

निर्यातुं दयितस्य पाणिकमलच्छायां विना वर्त्मनि ।

निद्रातुं च विनाङ्गपालिशयनं द्रष्टुं च शून्या दिशः

सख्या त्वत्प्रतिवीरनीरजमुखी साकूतमध्याप्यते ॥ ६५ ॥

अये मातस्तातः क्व गत इति यद्वैरिशिशुना

दरीगेहे लीना निमृतमिह पृष्टा स्वजननी ।

क्रेणास्यं तस्य द्रुतमथ निरुद्धचाश्रुभृतया

विनिःश्वस्य स्फारं शिष शिष दृष्टैवोत्तरयति ॥ ६६ ॥

(भानुकरस्यैते)

अधारिदम्पती—

अपण्यं भूमृद्वनमटति वल्काम्बरधरा

जटालो दिग्वासाः शिखरिणि त्रिवोऽयं निवसति ।

इति आन्तग्न्योन्यं क्षणमिलितयोः क्षोणितिलक

द्विपदम्पत्योस्ते शिव शिव भवन्ति प्रणतयः ॥ ६७ ॥

(कस्यापि)

अधारिनगरम्—

अलसमुज्ज्वलताभिर्नोदतो नागरीमि-

र्भवनदमनकानां नातिथिर्वा यभूव ।

त्वदरिनगरमध्ये संचरंश्चैत्रजन्मा

जरदजगरपीतः क्षीयते गन्धवाहः ॥ ६८ ॥

त्वदरिनृपतिकेलीसौधसंरूढदूर्वा-

ङ्कुरकवलनलोलं वीक्ष्य रङ्गं मुधांशोः ।

उपवनहरिणीनामुन्नतभ्रूलतानां

प्रसरति रतिजानिग्लानिजन्मा विवर्तः ॥ ६९ ॥

त्वद्वैरिभवनलिखितां सीतामाहर्तुमुद्धृत्य ।

कौणपकपिमण्डलयोः शिव शिव मूयो भवन्ति संरम्भाः ७०

(भानुफरस्यैते)

अधाक्षीणो लङ्कामयमयमुदन्वन्तमतर-

द्विशस्यं सौमित्रेरयमुपनिनायौपधिवनम् ।

इति स्मारं स्मारं त्वदरिनगरीभित्तिलिखितं

हनूमन्तं दन्तैर्दशति कुपितो राक्षसगणः ॥ ७१ ॥

(कस्यापि)

त्वद्वैरिणो दूरपलायितस्य प्रकाशयन्नक्तमरण्यमार्गम् ।

कृशानुरासीदभिनन्दनीयस्तुङ्गेषु लभो निजमन्दिरेषु ॥ ७२ ॥

(कस्यापि)

स्नाताः प्रावृषि वारिबाहसलिलैः संरूढदूर्वाङ्कुर-

व्याजेनात्तकुशाः प्रणालसलिलैर्देत्वा निवापाञ्जलीन् ।

प्रासादास्तव विद्विषां परिपतत्कुब्जस्थिपिण्डच्छला-

त्कुर्वन्ति प्रतिवासरं निजपतिप्रेतेषु पिण्डक्रियाम् ॥ ७३ ॥

(हनूमतः)

हस्ती वन्यः स्फटिकघटिते भित्तिभागे स्वबिम्बं

दृष्ट्वा दृष्ट्वा प्रतिगज इव त्वद्विषां मन्दिरेषु ।

दन्ताघाताद्दलितदशनस्तं पुनर्वीक्ष्य सद्यो

मन्दं मन्दं स्पृशति करिणीशङ्कया विक्रमार्क ॥ ७४ ॥

(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां तृतीयो व्यापारः ॥

चतुर्थो व्यापारः ।

अथ शृङ्गारः—

अथ शृङ्गारशृङ्गारसंभृताः पद्यरूपिणीः ।

व्यक्तीकुर्वे सुधाः सर्वे बुधाः संशीलयन्तु ताः ॥ १ ॥

अथ कामप्रभावः—

प्रतप्तायःपिण्डाविद्य किमपि संताप्य विशिखे-

र्यथा फल्पान्तेऽपि प्रविघटत एतौ नहि पुनः ।

तथा तौ देहौ यः सपदि शिषयोः संघटितवा-

नमुष्मै कामाय प्रतिनमत वामाय विबुधाः ॥ २ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ बालावर्णनम्—

किं कौमुदीः शशिकलाः सकला विचूर्ण्य

संयोज्य चामृतरसेन पुनः प्रयत्नात् ।

कामस्य घोरहरहुङ्कृतिदग्धमूर्तेः

संजीवनौषधिरियं विहिता विधात्रो ॥ ३ ॥

एकान्तसुन्दरविधानजडः कः धाता

सर्वाङ्गकान्तिमधुरं कच रूपमस्याः ।

भन्ये महेश्वरमयान्मकरध्वजेन

प्राणार्थिना युवतिरूपमिदं गृहीतम् ॥ ४ ॥

(कस्याप्येतौ)

अदम्भा हि रम्भा-विलक्षा च लक्ष्मीघृताची हिया चीरसंछादितास्या ।

अहो जायते मन्दवर्णाप्यपर्णा समाकर्ष्य तस्या गुणस्यैकदेशम् ॥ ५ ॥

(गदाधरस्य)

अथ वयःसन्धिः---

(सदृश्य)मानवदनस्मितलेशमीष-

न्मन्दायमानगतिरीतिपदारविन्दम् ।

अभ्यस्यमाननवविभ्रमशोभमेत-

दाह्यमानयुवमानससङ्गमस्याः ॥ ६ ॥

समुत्तमदुरःस्थलप्रसरमीषदालक्षित-

क्षणक्षणविलक्षणप्रचलदीक्षणावेक्षणम् ।

समुत्तसितविभ्रमादरदरभ्रमद्भूलतं

किमाचरितुमीहते वरतनोर्न जाने वयः ॥ ७ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

तव कुवल्याक्षि वक्षसि कुण्डलिता कापि काघनी कान्तिः ।

कुसुमेपोर्विजिगीषोर्भवति भुजे भूयसी कण्डः ॥ ८ ॥

रेखा काचन कञ्जलस्य नयमाम्भोजे मिथः कौशला-

दालीभिः सरलीकृतापि कुटिलीभावं समालम्बते ।

लक्ष्या वक्षसि पाणिपद्मविषमस्पर्शोदयादुत्तति-

र्जनीमो वयमेणशावनयने बाल्यं न पाल्यं तव ॥ ९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

न शीलं दृग्भङ्गी कलयति कुरङ्गीनयनयोः

कुचश्रीः कर्कन्धूफलमपि न बन्धूकृतवती ।

मुधायाः सध्रीची न च वचनवीची परिचिता

तथापि श्रीरस्या युवजननमस्या विजयते ॥ १० ॥

न दन्तुरमुरःस्थलं वचसि नाश्रिता चातुरी

चिकारि न विलोकितं भ्रुवि न वक्त्रिमोपक्रमः ।

तथापि हरिणीदृशो वपुषि कापि कान्तिच्छटा

पटावृतमहामणिद्युतिरियात्र संलक्ष्यते ॥ ११ ॥

(जयदेवस्य)

अचलं चलदिव चक्षुः प्रकृतमर्षीदं समुद्यदिव वक्षः ।

अतदिव तदपि शरीरं संप्रति वामभ्रुवो जयति ॥ १२ ॥

(कस्यापि)

अथ तारुण्यम् ।

उदयति तरुणिमतरणौ शैशवशशिनि प्रशान्तिमायाते ।

कुचचक्रवाक्युगलं तरुणितटिन्यां मिथो मिलति ॥ १३ ॥

(कस्यचित्)

परिहरति वयो यथा यथास्याः स्फुरदुरुकन्दुकशालि बालभावम् ।

द्रवयति धनुपस्तथा तथा ज्यां सृशति शरानपि सज्जयन्मनोभूः ॥ १४ ॥

(त्रिविक्रमस्य)

प्रातःस्मेरसरोरुहामयमुपाध्यायो दृशोर्विभ्रमः

प्राणिः फोफिलवाणि पाङ्गवसहाध्यायी समुन्मीलति ।

सन्दर्भो यच्चसां पचेलिमसुधासिद्धान्तवैतण्डिको

जानीमः कुसुमायुधस्य भगवान् भाग्यालये भार्गवः ॥ १५ ॥

वाणी कार्तिकरोहिणीपतिवलत्पीपूपकल्लोलिनी

धत्ते दृष्टिरकालकुन्दफलिकालावण्यलीलायितम् ।

नो जाने गमयिष्यतस्तव चिरादङ्गे दिनं केलिभिः

कस्य श्रीफलपीवरस्तनि भवेदेकादशस्थो गुरुः ॥ १६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

उदञ्चद्वक्षोजद्वयतटभरक्षोमितफटि-

स्फुरदृग्म्यां मन्दीकृतविलसदिन्दीवरयुगम् ।

समुद्यद्भूभङ्गप्रविहितधनुर्भङ्गमनिशं

वयस्तत्पद्मास्याः कथमिव मनो न व्यथयतु ॥ १७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ बालावयववर्णनम्—

तत्र केशपाशः—

आभाति शोभातिशयप्रपञ्चादेणीदृशोऽस्या रमणीयशोभा ।

वेणी लसत्कुन्तलधोरणीनां श्रेणीव किं चारुहरिन्मणीनाम् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

आभुग्नाङ्गुलिपल्लवौ कचभरे व्यापारयन्ती करौ
बन्धोत्कर्षनिबद्धमानसतया शून्यां दधाना दशम् ।
बाहूत्क्षेपसमुद्यते कुचतटे पर्यस्तचोलांशुका
हीसंकोचितबाहुमूलमुभगं बध्नाति जूटीं वधूः ॥ १९ ॥
(कस्यापि)

अथ सीमन्तसिन्दूरम्—

अये मातर्दृष्टा मुखममृतभानुभ्रमवशा-
त्कचच्छद्मा राहुर्वसति किमु वृष्णातरलितः ।
किमेवं कन्दर्पान्तकतरुणि सिन्दूरसरणि-
च्छलाद्भोक्तुं भूयो बहिरिव रसज्ञां रचयति ॥ २० ॥
(भानुकरस्य)

अथ भालसिन्दूरम्—

यस्याः संयमवान्कचो मधुकरैरभ्यर्ध्यमानो मुहु-
र्भृङ्गीगोपनजामिशापमचिरादुन्मार्ष्टुफामो निजम् ।
सीमन्तेन करेण कोमलरुचा सिन्दूरविन्दुच्छला-
दातप्तायसपिण्डमण्डलमसावादातुमाकाङ्क्षति ॥ २१ ॥
(गणपतेः)

अथालकः—

भालस्थली चन्द्रकलाफलङ्कलेस्वामु संतप्य ततो विमुक्ता ।
सैव क्रमालकुण्डलिता कपाले यत्रालकानां धियमातमोति ॥ २२ ॥
(गणपतेः)

अथाननम्—

अस्यैव रम्भोरु तवाननस्य दृष्टय संजीवितमन्मथस्य ।
वनं विधाता ननु नीगजानां नीगजनार्थं किमु निर्मिमीति ॥ २३ ॥

अस्यामपूर्वं इव कोऽपि कलङ्करिक्त-
श्चन्द्रोऽपरः किमुत तन्मकरध्वजेन ।

रोमावलीगुणमिलत्कुचमन्दरेण

निर्मथ्य नाभिजलधिं ध्रुवमुद्धतः स्यात् ॥ २४ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

विना सायं कोऽयं समुदयति सौरभ्यसुभगः

किरज्योत्स्नाधारामधिधरणि तारापरिवृढः ।

धनुर्धत्ते स्मारं तिरयति विहारं न तमसां

निरातङ्कः पङ्केरुहयुगलमङ्के नटयति ॥ २५ ॥

अथ भुवो—

स्मरकल्पद्रुमो बाले तव भाले द्विपत्रितः ।

पद्मयोरनयोदछाया भुवोर्व्याजादुदद्यति ॥ २६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

भूरेखायुगलं भाति तस्याश्चपलचक्षुषः ।

पद्मद्वयीव हरिता नासावंशविनिर्गता ॥ २७ ॥

(विह्गणस्य)

कर्णौ तावत्कुचलयदृशां लोचनाम्भोरुहाभ्या-

मभ्याक्रान्तौ फनकरुचिरो भालदेशोऽपि नेयः ।

इत्याशङ्काकुलितमनसा वेधसा कज्जलैर्धैः

सीमारेखा व्यरचि निविडभ्रूलताकैतवेन ॥ २८ ॥

(गणपतेः)

अथ नयनम्[ने]—

नयनस्य तुलां चक्रे नलिनेन नतभ्रुवः ।

ऊने च नलिने भृङ्गमापमे(व)[प]विधिर्दृष्टौ ॥ २९ ॥

(भानुकरस्य)

नतभ्रुवो लोचनसज्जरीटौ विहारमानङ्गमिहारभेते ।

कथं न सानन्दहृदो युवानस्तारुण्यमन्तर्निधिमुञ्चयन्तु ॥ ३० ॥

(गणपतेः)

दृशौ किमस्याश्चपलस्वभावे न दूरमाक्रम्य मिथो मिलेताम् ।

न चेत्कृतः स्यादनयोः प्रयाणे विघ्नं श्वःकृपनिपातभीत्या ॥ ३१ ॥

(श्रीहर्षस्य)

अथापाङ्गः—

पिपासुरिव संचलनिकटकणकूर्पाव....

ततः प्रतिचलन्पुनः श्रवणपाशभीतोऽभितः ।

तनोति तरलाकृतित्तरललोचने संततं

गतागतकुतूहलं मुहुरपाङ्गरङ्कुस्तव ॥ ३२ ॥

कचित्कृष्णार्जुनगुणा कचित्कर्णान्तगामिनी ।

अपाङ्गश्रीस्तवाभाति सुभ्रु भारतगीरिव ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

यासां फटाक्षविशिशैः स्मरचारेण ताडिताः ।

हृतचैतन्यसर्वस्वा मुद्यन्ते मुग्धकामुकाः ॥ ३४ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

वतंसनीलोत्पलपट्टदानां गीतामृतं श्रोतुमिवोचरङ्गौ ।

नतभ्रुवो लोचनकृष्णसारौ कर्णान्तिकं संततमाश्रयेते ॥ ३५ ॥

(गणपतेः)

अथ नासामौक्तिकम्—

तारापतेर्विम्बमिव त्वदास्यं संभाव्य भूमीतलशालिनं किम् ।

नासाग्रमुक्ताफलकैतवेन तारापि काचिद्विहितावतारा ॥ ३६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

सुधामयोऽपि क्षयरोगशान्त्यै नासाग्रमुक्ताफलकच्छलेन ।

अनङ्गसंजीवनदृष्टशक्तिर्गुस्तामृतं ते पिबतीव चन्द्रः ॥ ३७ ॥

(वैद्यनाथस्य)

अथ कर्णताटङ्कम्—

शशी हर्तुं लोभान्मुखकमलशोभां श्रुतितलं
सिपेवे सातङ्कस्तव तरुणि ताटङ्कपटात् ।
तदन्तःपीयूषं निखिलमथ निक्षेपुमधरे
मनोजन्मा मुष्णन्मुहुरहह सुच्छं तमकरोत् ॥ ३८ ॥
(रामचन्द्रस्य)

ताटङ्कमस्यास्तरलेक्षणाया मुक्ताफलैश्चारुरुचं विधत्ते ।
मुस्तश्रिया चन्द्रमिवाभिभूय वन्दीकृतं तारकचक्रवालम् ॥ ३९ ॥
(बिहणस्य)

अथाधरः—

तवैप विद्रुमच्छायो मरुमार्ग इवाधरः ।
करोति कस्य नो मुग्धे पिपासाकुलितं मनः ॥ ४० ॥
(कस्यापि)

अथ कण्ठः—

कण्ठस्य विदधे कान्तिं मुक्ताभरणता यथा ।
नास्य स्वभावरम्यस्य मुक्ताभरणता तथा ॥ ४१ ॥
(शकवृद्धेः)

मातङ्गकुम्भसंसर्गजातपातकशङ्कया ।
क्षातीव मुक्ताहारोऽस्याः स्फुरत्कान्तिजले गले ॥ ४२ ॥
(वैद्यमानोः)

अथ बाहू—

शब्दवद्विरलंकारैरुपेतमतिकोमलम् ।
सुवृत्तं काव्यवद्रेजे तद्बाहुलतिकाद्वयम् ॥ ४३ ॥
(शकवृद्धेः)

दयिताबाहुपाशस्य कुतोऽयमपरो विधिः ।
जीवयत्वर्पितः कण्ठे भारयत्यपवर्जितः ॥ ४४ ॥
(भासस्य)

अथाङ्गुल्यः—

मुदीर्घरेखाशालिन्यो बहुपर्वमनोहराः ।

तस्या विरेजुरङ्गुल्यः कामिनां संकथा इव ॥ ४५ ॥

(शकवृद्धेः)

अथ स्तनौ—

तवोपकण्ठस्थिततारहारस्फुरत्प्रभाशैवलिनीजलेषु ।

लीनो मनोजद्विष एव तस्य व्यक्तौ तु गण्डौ किमुरोजपिण्डौ ॥ ४६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

सतां समालोकयतां विवेकान्धर्वाणि हुत्वा स्मरयाणवहौ ।

धृष्टे स्तनश्यामशिरोभिषेण तनूदरी ज्यायुपमस्मविन्दुम् ॥ ४७ ॥

(भानुकरस्य)

मध्योऽयं बलिसद्म दृष्टिरधिकं पृथ्वी सुपर्वाल्यो

बाहुस्तत्कमलेक्षणा त्रिजगतीमेकैव संरक्षति ।

इत्येवं स्तनयोर्भिषेण कनकक्षोणीभृता संभृतौ

यस्यामात्मकिशोरकौ पविभयव्यग्रेण(जू)[ज]म्भद्विषः ॥ ४८ ॥

(गणपतेः)

अथ हारः—

सारङ्गाक्ष्या कुचकलशयोरन्तराकाशदेशः

प्राप्तच्छेदः कचिदपि चलन्प्रस्खलन्निष्पवात ।

नामीकूपः समजनि ततस्तस्य देहच्युतासौ

नक्षत्राणां ततिरिव समालम्बते हारशोभाम् ॥ ४९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ मध्यः—

नूनं कलत्रात्किमुपद्रुतोऽयं दीनः कचिल्लीन इवास्त्र मध्यः ।

तत्रापसरःसंनिभया च नाभ्या दूनस्ततोऽन्तर्हित एव सद्यः ॥ ५० ॥

(लक्ष्मणस्य)

देहं हेमद्युति परिहृताम्भोजवृष्टिं च दृष्टिं
 राशीमृतग्रमरपटलीचारुवेशं च केशम् ।
 दृष्ट्वा सद्यो विपुलहृदयानन्दमूढेन धात्रा
 सारङ्गाक्ष्याः किमु रचयितुं विस्मृतो मध्यदेशः ॥ ५१ ॥
 तुङ्गाभोगे स्तनगिरियुगे प्रौढविम्बे नितम्बे
 सीमादेशं हरति नृपतौ यौवने जृम्भमाणे ।
 मध्यो भीरुः कचिदपि ययौ पद्मपद्मेक्षणायाः
 शून्यं मध्यस्थलमिति ततः सर्वतः किंवदन्ती ॥ ५२ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

वध्या वयो मां त्रिवलीगुणेन गृह्णाति रोमावलिचेत्रवल्लीम् ।
 इतीव चिन्ताभरमङ्कुरोऽयं मध्यो मृगाक्ष्याः कृशतामुपैति ॥ ५३ ॥
 तस्या मुखेन्दोरवलोकनेन कराम्बुजं कुक्षलितं विधातुः ।
 मध्यस्तदन्तर्गमनादिवासौ कृशाङ्गयष्टेः कश्चिमानमाप ॥ ५४ ॥
 (द्वौ गणपतेः)

अथ रोमावली—

बाले तवोरोजसुवेलशैलं गन्तानुवेलं किमु कामरामः ।
 लावण्यपूरे तव सिन्धुनीरे रोमालिरस्यैव किमालि बन्धः ॥ ५५ ॥
 संलक्ष्यते संप्रति पक्ष्मलाक्षि क्षामा तवेयं नवरोमराजिः ।
 किं बालभावश्रिय एव नूनं निराकृताया इव वाष्पराजिः ॥ ५६ ॥
 (लक्ष्मणस्यैतौ)

गम्भीरनाभीद्वदसंनिधाने रराज तन्वी नवरोमराजिः ।
 मुखेन्दुभीतस्तनचक्रवाकचञ्चुच्युता शैवलमञ्जरीव ॥ ५७ ॥
 (लक्ष्मीधरस्य)

हरक्रोधज्वालावलिभिरवलीदेन वपुषा
 गभीरे ते नाभीसरसि कृतक्षम्यो मनसिजः ।

समुत्तस्यौ तस्मादचलत्तनये धूमलतिका

जनस्तां जानीते तव जननि रोमावलि रिति ॥ ५८ ॥

(शंकराचार्यस्य)

यूनां धैर्यतृणाङ्कुरं कवलयन्त्रीडाम्बुपूरं पिवन्

शृङ्गारो हरिणस्तव स्तनगिरेः सीमानमारोहति ।

नाभेः काचन तस्य निःसृतवती कस्तूरिकामालिका

रोमश्रेणिमहोत्सवं वितनुते कल्याणि जानीमहे ॥ ५९ ॥

निर्णेतव्यो मनसिजफलमन्त्रसिद्धान्तसारो

जेतव्या च त्रिदशमुदशामङ्गलावण्यलक्ष्मीः ।

रोमश्रेणीलिखनसुभगं पञ्चमादर्शयन्ती

पञ्चालम्बं जगति कुरुते सुभ्रुवो यौवनश्रीः ॥ ६० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पयोधरस्तावदयं समुन्नतो रसस्य वृष्टिः सविधे भविष्यति ।

अतः समुद्रच्छति नाभिरन्वतो विसारि रोमालिपिपीलिकावलिः ॥ ६१ ॥

(गणपतेः)

अथ जघनम्—

तस्याः पद्मपलाशाद्यास्तन्व्यास्तज्जघनं धनम् ।

दृष्टं सखीभिर्याभिस्ताः पुंभावं मनसा ययुः ॥ ६२ ॥

(वाल्मीकेः)

अथोरुः[रू]—

नूनमूरुद्वयं तस्या रम्भा चपलचक्षुषः ।

सूते यत्कीर्तिकर्षूरपूरं मदनभूषतेः ॥ ६३ ॥

(भानुकरस्य)

अथ पादा—

अमूल्यस्य मम स्वर्णतुलाकोटिद्वयं कियत् ।

इति कोपादिवाताग्रं पादयुग्मं सृगीदृशः ॥ ६४ ॥

(विहरणस्य)

अथेतस्ततो वर्णनम्—

जानीमो वयमासनस्य कमले तस्या मुखेन्दोस्त्विषा

संकोचं समुपागते स भगवान्दुःखः सरोजासनः ।

भुमं भ्रूलतिकायुगं विहितवान्वक्त्रे दृशौ सृष्टवान्

मध्यं विस्मृतवान्कचं च कुटिलं वामश्रुवः क्लृप्तवान् ॥ ६५ ॥

जानीमो वदनं सरोरुहदृशो निर्माय पश्यन्मुहु-

र्ह्यप्यत्कामकठोरपावकशिखासंतापितः पद्मम् ।

रम्भामूरुतटीं स्तनं रसघटीं पीयूषवीचीं वचो

वाहू बालविसं करं किसलयं नामीं सरो निर्ममे ॥ ६६ ॥

व्याफोशकोकनदशोककरः करोऽयं

खेलच्चकोरमदचोरमिदं च चक्षुः ।

उन्निद्रैविद्रुमरहस्यहरोऽधरोऽयं

तत्स्यादरप्यमपि वश्यमवश्यमस्याः ॥ ६७ ॥

(भानुकरस्यैते)

इति श्रीआद्योत्तरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां

चतुर्थो व्यापारः ।

पद्यगो व्यापारः ।

अथ विरहिणीवर्णनम्—

लसन्मल्लीमाल्यं मदनशरशल्यं हि मनुते

सुपूरं कर्पूरं विमलमपि दूरं विकिरति ।

परं तारं हारं पुनरुरसि भारं कलयति

यदि प्राणान्वाला कलयति च हान्मद्भ्रमिव ॥ १ ॥

इयं घत्ते धीरे मलयजसमीरे न च मुदं

न पद्मानां वृन्दे ललितमकरन्देऽपि रमते ।

न वा सा सानन्दा भवति नवकुन्दावल्गिकुन्दे

तदेतस्या बाधाहरमपि समाधानमिदं किम् ॥ २ ॥

स्थगयति नयनासं छद्मना धूमधूम्
प्रथयति च नितान्तं कार्श्यमङ्गप्रकृत्या ।

अहह विरहबाधां छादयत्यम्बुजाक्षी
तदपि वदति साक्षी पाण्डुरो गण्डदेशः ॥ ३ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

घनोऽयं चेदञ्चेदुपरि विकिरंश्चन्दनरसा-

नुदारा नैहारी सरिदुरसि हारीभवति वा ।

समन्तान्मार्गाली चिरमुपवनाली मिलति वा

तदप्यस्यास्तापो हरिविरहजः किं विरमति ॥ ४ ॥

धुलुकयसि चन्द्रदीधितिमविरलमश्रासि नूनमङ्गारान् ।

अधिकतरमुष्णमनयोः किमिह चकोरावधारयसि ॥ ५ ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

लज्जयेत तनूल्तेति विसिनीपत्रेण नो वीज्यते

स्फोटः स्यादिति नाङ्गकं मलयजक्षोदाम्भसा सिच्यते ।

स्यादस्यातिभरात्परामव इति त्रासान्नवा पल्लवा-

रोपो बक्षसि तत्कथं वरतनोर्बाधा समाधीयते[ताम्] ॥ ६ ॥

(जयदेवस्य)

चित्राय त्वयि चिन्तिते स्मृतिभुवा सज्जीकृतं त्वं धनु-

र्वर्तिं धर्तुमुपागतेऽङ्गुलियुगे याणा गुणे योजिताः ।

आरब्धे तव चित्रकर्मणि पुनस्तद्वाणमिक्षा सती

भित्तिं द्रागवलम्ब्य सिंहलपते सा तत्र चित्रायते ॥ ७ ॥

(कस्यापि)

परिम्लानं पीनस्तनजघनसंगादुभयत-

स्तनोर्मध्यस्यान्तः परिमिलनमप्राप्य हरितम् ।

इदं व्यस्तन्यस्तं रुच्यमुजलताक्षेपवलनैः

कृशाङ्गचाः संतापं वदति विसिनीपत्रशयनम् ॥ ८ ॥

(कालिदासस्य)

शिव सहसैव पुष्पधन्वा प्रलयनटेन किमित्यकारि भस्म ।

ते जगदेव यत्पिशाचः स च मणिमन्त्रमहौषधैर्न साध्यः ॥ २५ ॥

(वाणीविलासस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां

प्रथमो व्यापारः ।

पद्यो व्यापारः ।

यकविप्रलम्भः—

शूरो नारोपितः कण्ठे स्पर्शसरोधभीरुणा ।

द्वानीमन्तरे जाताः सरित्सागरपर्वताः ॥ १ ॥

(वाल्मीकेः)

देव्यचक्षुरहं जातः सरागेणापि चक्षुषा ।

हस्यो येन पश्यामि देशान्तरगतां प्रियाम् ॥ २ ॥

(कस्यापि)

कारि मन्दमतिना रतिपतिना नीतितन्त्रनिपुणेन ।

तासि हरिणनयने हन्त हृदि स्नेहतन्तुना न तनौ ॥ ३ ॥

(रामचन्द्रस्य)

नुत्कीर्णे तन्व्या निशितनयनान्तेन मृदिते

स्तनद्वन्द्वस्पन्दैः स्मितलवमुधाभिः ध्रुतिमति ।

दन्त मदनकृपिकारेण जनिता

श्री किमिति न फलं हन्त लभते ॥ ४ ॥

(मैथिलस्य)

भव सखे सिद्धानुभावो भवान्

धेतं निजहितं मूकत्वमालम्ब्यताम् ।

हृत्वरं तत्तात विश्रम्यता-

हो दध्वान घन्योऽम्बुदः ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

चूडारत्नमपांनिधिर्यदि भवेच्चेत्कुण्डलं गण्डकी

कावेरी यदि कङ्कणं यदि पुनर्ग्रेवेयकं गौतमी ।

मुक्तासृक् सुरनिम्नगा यदि यदि स्यान्मेखला नर्मदा

कौशेयं यदि कौशिकी कृततनोस्तापस्तदापैति वा ॥ १७ ॥

जीवेन तुलितं प्रेम सखि मूढेन वेधसा ।

लघुर्जीवो ययौ कण्ठं गुरु प्रेम हृदि स्थितम् ॥ १८ ॥

(पडैते भानुकरस्य)

तस्यास्तनौ विरहताण्डयरङ्गभूमौ

स्येदोदविन्दुकुसुमाञ्जलिमाविकीर्य ।

नान्दीं पपाठ पृथुवेपथुवेपमान-

काञ्चीलताफलरवैः स्मरसूत्रधारः ॥ १९ ॥

श्रीखण्डद्रवदीर्घिकापरिवृतप्रान्तासु निःशेषतः

प्रालेयाचलफन्दरासु विहितक्रीडासु मन्दानिलैः ।

माधीभिः क्षणदाभिरेव जनितं गण्डोपधानीभव-

चन्द्रं तल्पमपाकरिष्यति न वा संतापमेणीदृशः ॥ २० ॥

मदफलकृतान्तकासरखुरपुटनिर्धूतधूलिसंकाशम् ।

केतकरजो निवार्य सखि यदि कार्यं मम प्राणैः ॥ २१ ॥

जानीमस्तव गौरि चेतसि चिरं शंभुः समुज्जृम्भते

तापो नेत्रतनूनपादिव तनौ तीमः समुन्मीलति ।

अक्षोरश्रुमिषेण गच्छति बहिर्गङ्गातरङ्गावलिः

पाण्डित्तः कपटेन चन्द्रकलिकाकान्तिः समुन्मीलति ॥ २२ ॥

प्रियसखि न तथा पटीरपङ्को न च नलिनीदलमारुतोऽपि शीतः ।

शमयति मम देहदाहमेतं सपदि कथापि यथा नरेन्द्रसूनोः ॥ २३ ॥

(पञ्चैते गणपतेः)

अथ स्मरोषालम्भः—

हृदयमाश्रयसे यदि मामकं ज्वलयसि त्वमनङ्ग तदेव किम् ।

स्वयमपि क्षणदग्धनिजेन्धनः क भवितासि हताश हुताशवत् ॥ २४ ॥

(श्रीहर्षस्य)

शिव शिव सहसैव पुष्पधन्वा प्रलयनटेन किमित्यकारि भस्म ।

भ्रमयति जगदेष यत्पिशाचः स च भणिमन्नमहौषधैर्न साध्यः ॥ २५ ॥

(चाणीविलासस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां

पञ्चमो व्यापारः ।

षष्ठो व्यापारः ।

अथ नायकविप्रलम्भः—

हारो नारोपितः कण्ठे स्पर्शसंरोधभीरुणा ।

इदानीमन्तरे जाताः सरित्सागरपर्वताः ॥ १ ॥

(वाल्मीकेः)

दिव्यचक्षुरहं जातः सरागेणापि चक्षुषा ।

इहस्यो येन पश्यामि देशान्तरगतां प्रियाम् ॥ २ ॥

(कस्यापि)

किमकारि मन्दमतिना रतिपतिना नीतितन्त्रनिपुणेन ।

स्यूतासि हरिणनयने हन्त हृदि खेहतन्तुना न तनौ ॥ ३ ॥

(रामचन्द्रस्य)

समुत्कीर्णे तन्व्या निशितनयनान्तेन मृदिते

स्तनद्वन्द्वस्पन्दैः स्मितलवमुषाभिः पुतिमति ।

मदन्तःकेदारे मदनकृपिकारेण जनिता

चिरादाशावल्ली किमिति न फलं हन्त लभते ॥ ४ ॥

(मैथिलस्य)

श्रीखण्डानिल निर्वृतो भव सखे सिद्धानुभावो भवान्

आतः कोकिल साधितं निजहितं मूकत्वमालम्ब्यताम् ।

शीतांशो विहितं यक्षो बहुतरं तत्तात विश्रम्यता-

मस्मत्प्राणबहिःप्रयाणपटहो दध्वान धन्योऽम्बुदः ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

रे सारङ्गा वनवसतयस्तत्त्वमाख्यात यूयं
 कुत्रासीतं त्रिभुवनमनोहारि चाञ्चल्यमक्ष्णोः ।
 आं जानीमो गमनसमये हन्त कान्तारसीम-
 न्येकाकिन्याः कुवलयदृशो लुण्ठिता यौवनश्रीः ॥ ६ ॥
 (उमापत्युपाध्यायस्य)

अत्रासितं शयितमत्र निपीतमत्र
 तोयं तथा सह मया विधिवञ्चितेन ।
 इत्यादि हन्त परिचिन्तयतो वनान्ते
 रामस्य लोचनपयोभिरभूत्पयोधिः ॥ ७ ॥
 (कस्यापि)

खं यान्ति नो नीरधरा न यावच्छम्पा न शम्पाकुलिताश्च चेलुः ।
 रामस्य तावन्नयनाम्बुपुरैः पम्पा तु संपातिभिरापुपुरैः ॥ ८ ॥
 वसन्त किं हन्त तनोपि तापं माकन्द मन्दं क्षिप मा मरन्दम् ।
 अचण्डभानो जहि चण्डभावं रामस्य कोपी खलु कोऽपि कालः ॥ ९ ॥

माकन्द क्षिप मा मरन्दनिकरं सूको भव त्वं शुक्र
 स्फारं फोफिल कोमलं फलरवं आतः क्षणं संहर ।
 सौगन्ध्यं वह गन्धवाहन मनावसर्वैः क्षणं क्षम्यतां
 जानीध्वं रघुनायकस्य यदयं कालः करालो महान् ॥ १० ॥
 (लक्ष्मणस्यैते)

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया-
 मात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम् ।
 असौस्तावन्मुहुरुपचितैर्दृष्टिरालुप्यते मे
 क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमं नो कृतान्तः ॥ ११ ॥
 तस्मिन्काले जलद यदि ता लब्धनिद्रासुखा स्या-
 चत्रासीनः स्तनितविमुखो याममात्रं सहस्र ।

भाभूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथंचि-

त्सद्यः कण्ठच्युतमुजलतामन्थि गाढोपगूढम् ॥ १२ ॥

(कालिदासस्यैतौ)

यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति सलिले मयं तदिन्दीवरं

मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी ।

येऽपि त्वद्गमनानुसारिगतयस्ते राजहंसा गता-

स्त्वत्सादृश्यविनोदमात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते ॥ १३ ॥

वनी मुनीनां तटिनी तरूणां दरी गिरीणां च गवेपितैव ।

अतः परं लक्ष्मण पद्मलार्द्धी प्राणा बहिर्भूय गवेपयन्तु ॥ १४ ॥

(कस्याप्येतौ)

जाने कोपपराङ्मुखी प्रियतमा स्वप्नेऽद्य दृष्टा मया

मा मा संस्पृष्ट पाणिनेति रुदती गन्तुं प्रवृत्ता ततः ।

नो यावत्परिरभ्य चाटुकशतैराश्रासयामि प्रियां

आतस्तावदहं शठेन विधिना निद्रादरिद्रीकृतः ॥ १५ ॥

(निद्रावरिद्रस्य)

कुवलयनयनार्कुचान्तरेषु क्षणमपि येषु न शेरते युवानः ।

शिव शिव करुणापराङ्मुखोऽयं गणयति तान्यपि वासराणि वेधाः ॥ १६ ॥

पुनरपि मिलनं यदा कदाचिद्विगतमया कृपया भवेद्विधातुः ।

हरिरिव करवै हृदि प्रतिष्ठां हर इव किं तनवै तनोरभिन्नाम् ॥ १७ ॥

(कस्याप्येतौ)

अद्यापि तन्मनसि संपरिवर्तते मे

रात्रौ मयि क्षुत्तवति क्षितिपालपुत्र्या ।

जीवेति मङ्गलवचः परिहृत्य कोया-

त्कर्णे कृतं कनकपत्रमनालपन्त्या ॥ १८ ॥

(विह्वलस्य)

स्खलदंशुकमव्यवस्थितारं स्मितकान्ति सपिताधरप्रयालम् । :

असमाप्तनकारमाप्तशोभं हरिणाङ्गं हरिणीदृशः स्मरामः ॥ १९ ॥

कुन्दं दन्तैर्मधु निगदितैः पदपदी दृग्विलासै-

रेभिर्हासैरमृतलहरी कुन्तलैरम्बुवाहम् ।

इन्दोर्बिम्बं वदनशशिना पङ्कजं च सनाभ्यां

त्वं जित्वा मे वससि हृदये तेन ते मां द्विपन्ति ॥ २० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

इति श्रीआहोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां

षष्ठो व्यापारः ।

सप्तमो व्यापारः ।

अथ संक्षेपतो वक्ष्ये मृगाक्षीणामवान्तरम् ।

भेदं बुधाः सुधाकरुणं तमाकरुणं भजन्त्वमी ॥ १ ॥

अथ कुलाङ्गना—

प्रेरयन्ति हृदयं न लोचनं नर्तयन्ति मदनं न दुर्यशः ।

वारयन्त्यविनयं न संभ्रमं स्नेहसारशरणं कुलस्त्रियः ॥ २ ॥

(गणपतेः)

पदन्यासो गेहाद्वहिरद्विफणारोपणसमो

वचो लोकात्म्यं कृपणधनतुल्यं मृगदृशः ।

निजावासादन्यद्भवमपरद्वीपतुलितं

पुमानन्यः कान्ताद्विधुरिव चतुर्थीसमुदितः ॥ ३ ॥

(लक्ष्मणठकुरस्य)

गतागतकुतूहलं नयनयोरपाङ्गावधि

स्मितं कुलनतभुवामधर एव विश्राम्यति ।

वचः प्रियतमश्रुतेरतिथिरेव कोपक्रमः

कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं भजति ॥ ४ ॥

(भानुकरस्य)

लज्जावशान्नमितमन्धरदृष्टिपातं

यैश्रुम्भितं कुलवधूवदनारविन्दम् ।

तेषामनेकपुरुषव्रणिताधरेषु

तृप्तिः कथं भवति वेशवधूमुखेषु ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

अथ कुलाङ्गनाकोपः—

तारुण्यं मुखमण्डले न च वचोवैदग्ध्यमन्यादृशं

न भ्रूभङ्गपरिग्रहो न च रहः प्रक्षेऽपि मौनस्थितिः ।

एवं संप्रति तर्क्यते तु सुदृशः कोपस्तु यद्वस्तुनि

स्वाधीने पुनरेव पङ्कजदृशो यन्न प्रभुत्वग्रहः ॥ ६ ॥

(गणपतेः)

मन्यायाते सपदि शयनादुत्थितं चारुवाक्यं

वध्वा पाणी बहु निगदितं क्षालितं पादपद्मम् ।

दत्त्वा धीर्दीं सविनयमधोद्वीजितं तालवृन्तै-

र्त्रैते कोपं कुवलयदृशो भूयसी भक्तिरेव ॥ ७ ॥

अथ प्रोप्यत्पतिका—

नायं मुञ्चति सुश्रुचामपि तनुत्यागे वियोगज्वर-

स्तेनाहं विहिताञ्जलिर्यदुपते पृच्छामि सत्यं वद ।

ताम्बूलं कुसुमं पटीरमुदकं यद्वन्धुभिर्दायते

स्यादत्रैव परत्र तत्किमु विषज्वालावलीदुःसहम् ॥ ८ ॥

(मानुकरस्यैतौ)

प्रस्थानं वलयैः कृतं प्रियसखैरस्रैरजसं गतं

धृत्या न क्षणमासितं व्यवसितं चित्तेन गन्तुं पुरः ।

यातुं निश्चितचेतासि प्रियतमे सर्वे समं प्रस्थिता

गन्तव्ये सति जीवितं प्रियमुद्वृत्तार्थः किमुत्सृज्यते ॥ ९ ॥

यात्रामङ्गलसंविधानरचनाव्यग्रे सखीनां गणे

वाप्पाम्भःपिहितेक्षणे गुरुजने तद्वत्सुहृन्मण्डले ।

प्राणेशस्य मदीक्षणार्पितदशः कृच्छ्रदतिक्रामतः

किं ब्रीडाहतया मया भुजलतापाशो न कण्ठेऽर्पितः ॥ १० ॥

(कस्याप्येतौ)

गच्छ गच्छसि चेत्कान्त पन्थानः सन्तु ते शिवाः ।

ममापि जन्म तत्रैव भूयाद्यत्र गतो भवान् ॥ ११ ॥

(दण्डिनः)

उद्यद्बर्हिषि वर्दुरारयपुषि प्रक्षीणपान्थायुषि

च्योतद्विप्रुषि चन्द्ररुम्भुषि सखे हंसद्विषि प्राश्रुषि ।

मा मा भुञ्ज कुचाग्रसंततपतद्वाप्याकुलां बालिकां

काले कालकरालनीलजलदव्यानुसमास्त्विवि ॥ १२ ॥

(बाणस्य)

अथ प्रोषितपतिका—

लिखति न गणयति रेखां निर्भरबाष्पाम्बुधौतगण्डतला ।

अवधिदिवसावसानं मामूदिति शङ्किता बाला ॥ १३ ॥

(मोरिकायाः)

समर्प्य हृदि दारुणां मदनवेदनां भूयसी-

मनेन वनवर्त्मना प्रचलितः स मे बल्लभः ।

न वामदिशि शब्दितं किमिति वा त्वया वायस

त्वया सदनसारिके किमिति वा कृतं न क्षुत्तम् ॥ १४ ॥

(भानुकरस्य)

अथोत्कण्ठिता—

द्वारि सम्भविलम्भा प्रियसखि दृष्टिं पथि क्षिपसि ।

प्रहिणोषि भाग्यभाजि प्रेयसि द्यूतीमिव अमरीम् ॥ १५ ॥

(भानुकरस्य)

अम्भोरुहाक्षि शम्भोश्चरणावाराधितौ केन ।

यस्मै विचलितवदना मदनाकृतं विभावयसि ॥ १६ ॥

(गणपतेः)

अथाङ्गनावान्तरभेदाः । तत्र नवोदाः—

फाञ्चीदाम निवेशयन्वितनुते वासः श्लथं सुमुक्तेः

हारं वक्षसि योजयन्करतलं धत्ते कुचाम्गोस्ते ।

जल्पंश्चादुवचोऽधरं धयति यत्प्रेयान्कुतो विस्मयः

पांशुं चक्षुषि विक्षिपन् यदि धनं गृह्णासि(ति) पाटञ्चरः ॥ १७ ॥

(भानुकरस्य)

बलाव्रीता पार्श्वे मुसममिमुखं नैव कुरुते

धुनाना मूर्धानं हरति बहुशश्चुम्बनविधिम् ।

हृदि न्यस्तं हस्तं क्षिपति गमनारोपितमना

नवोदा वोढारं रमयति च संतापयति च ॥ १८ ॥

(कस्यापि)

विरम नाथ विमुञ्च ममाञ्चलं शमय दीपमिमं समया सखी ।

इति नवोदवधूवचनैर्युवा मुदमगादधिकां सुरतादपि ॥ १९ ॥

(रुद्रस्य)

चुम्बनेषु परिवर्तिताधरं हस्तरोधि रसनाविषहने ।

विमितेच्छमपि तस्य सर्वतो मन्मथेन्धनमभूद्रधूरतम् ॥ २० ॥

(कालिदासस्य)

अथ विस्रब्धनवोदाः—

दत्तं करं वक्षसि मीलिताक्षी श्लथेन दूरीकुरुते करेण ।

आचुम्बिता नेति मुहुर्विधत्ते मुखं पुनः संमुखमेव धत्ते ॥ २१ ॥

(गणपतिः)

दीपाङ्कुरः स्फुरति पश्यति केलिकीरो

जाले निवेशितमुखी च सखी चकास्ति ।

इत्थं विचिन्त्य वचसा न शशाक बाला

नाथं निषेद्धमनिषेद्धमपि त्रपाभिः ॥ २२ ॥

(भानुकरस्य)

अथ मुग्धा—

नीरात्तीरमुपागता श्रवणयोः सीम्नः(मि) स्फुरन्नेत्रयोः

श्रोत्रे लग्नमिदं किमुत्पलमिति ज्ञातुं करं न्यस्यति ।

शैवालाङ्कुरशङ्कया शशिमुखी रोमावलीं प्रोञ्छति

श्रान्तास्मीति मुहुः सस्त्रीमविदितश्रोणीमरा पृच्छति ॥ २३ ॥

अथ मध्या—

स्नापे प्रियाननविलोकनहानिरेव

स्वापच्युतौ प्रियकरमहणमसङ्गः ।

इत्थं सरोरुहमुखी परिचिन्तयन्ती

निद्रां विधातुमविधातुमपि प्रपेदे ॥ २४ ॥

(भानुकरस्येतौ)

अथ प्रौढा—

मदानने जुम्बनचञ्चलस्य प्रियस्य संस्पृष्टकुचस्थलस्य ।

नीवीपु भावी करसंनिवेशस्तद्वामनी यामिनि मैव मूयाः ॥ २५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथासती—

अयं रेवाकुलः कुसुमशरसेवासमुचितः

समीरोऽयं वेलाम्बनविदलदेलापरिमलः ।

इयं प्रावृद् धन्या नवजलदबिन्द्यासचतुरा

स्मराधीनं चेतः सखि किमपि कर्तुं मृगयते ॥ २६ ॥

अथ विदग्धासती—

देहे दुर्ललितस्य देवराशिगोः स्फोटव्रणो दारुणो

मातस्तेन वनस्पतित्वचमुपाहर्तुं मया गम्यते ।

दृप्यन्तु श्वसितानि घर्मसलिलैः पत्राणि लुप्यन्तु वा

वक्षो वा विलिखन्तु इन्त नक्षरैः क्रुद्धाः कपिश्रेणयः ॥ २७ ॥

(भानुकरस्येतौ)

प्रियो मयैवावचितैः प्रसूनैर्हृष्टो हरस्यातनुते सपर्याम् ।

अतो नतानेकलतावृतानि यास्यामि सायं विपिनानि सख्यः ॥२८॥

(कस्यापि)

अथ गुप्तासती—

श्रद्धः कुप्यतु निर्दिशन्तु सुहृदो निन्दन्तु वा यातर-

स्तस्मिन्किंतु न मन्दिरे सखि पुनः स्वापो विधेयो मया ।

आखोराक्रमणाय कोणकुहरादुत्फालमातन्वती

मार्जारी नखरैः खरैः कृतवती कां कां न मे दुर्दशाम् ॥२९॥

अथ लक्षितासती—

कोकः स्तोकेविमुक्तमौक्तिकमरो निःस्यन्दमिन्दीवरं

चापं चापलवर्जितं हिमकरक्रोडे तमः क्रीडति ।

वातः कातरयत्पपाकृत्तरसं बन्धूकमेतावती

वार्ता कापि कदापि पाणिपिहिता कस्यापि वा तिष्ठति ॥ ३० ॥

अथ वेश्या—

केशः कुन्दमिषादिवोपहसति द्रव्यैर्विहीनाञ्जना

न्यूनां मन्त्रिधनं विलोकितुमिवोद्गीवः स्तनस्तिष्ठति ।

प्रेमच्छेदकृपाणवल्लिसुपमा रोमालिरालम्बते

यस्याः सा कथमस्तु चेतसि चमत्काराय वाराङ्गना ॥ ३१ ॥

अथ कुलटा—

एते वारिकणान्किरन्ति पुरुषान्वर्षन्ति नाम्भोधराः

शैलाः शाद्वलमुद्वमन्ति न वमन्त्येते पुनर्नायकान् ।

त्रैलोक्ये तरवः फलानि सुक्ते नैवारमन्ते जना-

न्धातः कातरमालपामि कुलटाहेतोस्त्वया किं कृतम् ॥ ३२ ॥

शिरसि शिरसिजं दृशोर्निमेषं विटपिनि पल्लवमालये तृणं वा ।

गणयितुमपि पारयन्ति केचित्प्रियसखि के कथयन्तु जारसंख्याम् ॥३३॥

दिवसे घटिकासिञ्चत्रिंशद्घटिकाः परं रजनौ ।

लक्षं नगरयुवानस्तात विधातः किमाचरितम् ॥ ३४ ॥

स्थानं नास्ति क्षणं नास्ति वक्तारमिति सुश्रुवः ।

जहास हारकूटेन पयोधरमहीधरः ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैते)

दुर्दिवसे घनतिमिरे दुःसंचारासु नगरवीथीषु ।

पत्युर्विदेशगमने परमसुखं जघनचपलायाः ॥ ३६ ॥

(जघनचपलायाः)

अथ कुलटोपदेशः—

ययं यास्ये बालांस्तरुणिमनि यूनः परिणता-

वपीच्छामो वृद्धान्परिणयविधीनां स्थितिरिति ।

त्वयारब्धं जन्म क्षपयितुमनेनैकपतिना

न मे गोत्रे पुत्रि कचिदपि सतीलान्छनममृत् ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

नारीणां खलु बन्धुरन्धतमसं पाथोधरः सोदरः

कुञ्जं नाभिगृहं निशा सहचरी सेव्यः स्मरः क्षमापतिः ।

इत्थं चारुचकोरचञ्चलदृशां यासां मतिर्जायते

तासामेव यशः सुधांशुधवलं तासां गृहे वृद्धयः ॥ ३८ ॥

चेत्पौरादपि शङ्कसे हिमरुचेरप्यर्चिपो लज्जसे

भोगीन्द्रादपि चेद्विभेपि तिमिरस्तोमादपि त्रस्यसि ॥

चेत्कुञ्जादपि दूयसे जलरधध्वानादपि क्षुभ्यसि

प्रायः पुत्रि हतास्मि हन्त भविता त्वचः कलङ्कः कुले ॥ ३९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

सुखशय्या ताम्बूलं विश्रब्धाश्लेषचुम्बनादीनि ।

सुलयन्ति न लक्षांशं त्वरितक्षणचौर्यमुरतस्य ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

एकानपाद्गैरपरास्तरङ्गैर्भुवोर्विलासैस्तिरं च हासैः ।

विमोहयत्यन्यमहो रहोभिः को वा कलां वेद कलावतीनाम् ॥ ४१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

इति श्रीआद्योलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां सप्तमो व्यापारः ।

अष्टमो व्यापारः ।

अथ सौन्दर्यगर्विता—

भामिन्यो विदधतु भागधेयभाजः केयूरं सजमवतंसमम्बुजातैः ।

धिदैवं ग्रमं तु विभूषणं विदूरे रोलम्बादधरनिवारणं पुमर्पः ॥ १ ॥

(कस्यापि)

अथ प्रेमगर्विता—

वपुषि तव तनोति रत्नगूपां

प्रभुरिति घन्यतमासि किं ब्रवीमि ।

सखि तनुनयनान्तरालभीरुः

कलयति मे न विभूषणानि कान्तः ॥ २ ॥

अथ खण्डिता—

वक्षोजलण्डितपुरो दमितस्य वीक्ष्य

दीर्घं न निःश्वसिति जल्पति नैव किञ्चित् ।

प्रातर्जलेन वदनं परिमार्जयन्ती

बाला विलोचनजलानि तिरोदधाति ॥ ३ ॥

अथ फलहान्तरिता—

चलं चेतः पुंसां सहजसरलाः पङ्कजदृशो

भवत्येव क्रोधः कचिदपि कदाचित्चरुणयोः ।

दहेदङ्गं भृङ्गी विधुरपि विदध्यात्परिमव

स्मरो मां मञ्जीयादिति किमपि नाज्ञासिपमहम् ॥ ४ ॥

अकरोः किमु नेत्रशोणिमानं किमकार्षीः करपद्मवर्जितम् ।

कलहं किमघाः क्रुधा रसज्ञे हितमर्थं न विदन्ति दैवदृष्टाः ॥ ५ ॥

विरमति कथनं विना न खेदः सति कथने समुपैति कापि लज्जा ।

इति कलहमधोमुखी सखीभ्यो लपितुमनालपितुं समाचकाङ्क्ष ॥ ६ ॥

(मानुकरस्यैते)

अथ दूती—

माला बालाम्बुजदलमयी मौक्तिकी हारयष्टिः

काञ्ची किं च त्वयि यदुपते प्रस्थिते प्रस्थितैव ।

भ्रूमस्तस्याः किमिह घमनी वर्तते वा न वेति

ज्ञातुं चाहोरहह बलयं पाणिमूलं प्रयाति ॥ ७ ॥

(भानुकरस्य)

न नीतमुपनासिकं परिमलव्ययाशङ्कया

न हन्त विनिवेशितं विरहवहिकुण्डे हृदि ।

दृशोर्बहिरिति श्रुतौ न निहितं प्रियप्रेषितं

फरे कमलमर्षितं मृगदृशा दृशा पीयते ॥ ८ ॥

(अबिलम्बस्य)

मुहुर्ज्वलनवीजजैर्बहलचन्दनासेचनैः

सरोजदलवेष्टनैरपि न चेष्टते सुन्दरी ।

परंतु तव नामनि प्रियसखीभिरायेदिते

निवेदयति जीवितं श्रवणसीमि रोमोद्गमः ॥ ९ ॥

(बाबूमिश्रस्य)

अथ दूत्युपहासः—

किं त्वं निगूहसे दूति स्तनौ वक्रं च पाणिना ।

खण्डिता एव शोभन्ते शराभरपयोधराः ॥ १० ॥

(कस्यापि)

निःशेषच्युतचन्दनं स्तनतटे निर्गृष्टरागोऽधरो

नेत्रे दूरमनज्जने पुलकिता तन्वी तवेयं तनुः ।

मिथ्यावादिनि दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमे

वापीं स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम् ॥ ११ ॥

(अमरुकस्य)

त्वं दूति निरगाः कुञ्जं न तु पापीयसो गृहम् ।

किंशुक्राभरणं देहे दृश्यते कथमन्यथा ॥ १२ ॥

(भानुकरस्य)

अथ मानिनीमानः—

कोपो यत्र अकुटिरचना विग्रहो यत्र मौनं
यत्रान्योन्यस्मितमनुनयो दृष्टिपातः प्रसादः ।
तस्य प्रेम्णस्तदिदमधुना वैशसं पश्य जातं
त्वं पादान्ते लुठसि न च मे मन्युमोक्षः स्त्रलायाः ॥ १३ ॥
(वामनस्य)

यदाभूदस्माकं प्रथममविभक्ता तनुरियं
ततो नु त्वं प्रेयानहमपि हताशा प्रियतमा ।
इदानीं नाथस्त्वं वयमपि कलत्रं किमपरं
मयाप्तं प्राणानां कुलिशकठिनानां फलमिदम् ॥ १४ ॥
(अमरुकस्य)

अथ मानापनोदः—

त्रियामायामस्यां सुतनु यमुनायामिव तर-
त्तरङ्गप्रोदञ्चद्विमलदलरक्तोत्पलमिव ।
इयं दृष्टिः शोणा मयि निहितकोणा विजयते
त्यज क्रोधं रागे मयि निरपराधे कुरु कृपाम् ॥ १५ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ परस्परप्रीतिप्रलापः ।

तत्रादौ नायिकायाः—

सहस्रनेत्रैः प्रियगात्रशोभां विभावनीयां तु निभालयन्त्याः ।
किं लोचनाम्भोरुहयुग्मपत्रं विधाय धातुः परिवर्द्धितास्मि ॥ १६ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ नायकस्य—

त्वदीयमुखपङ्कजं यदि विधोरलं चार्तया
तवाधरसुधा यदा भवति किं सुधा नो मुधा ।
त्वदङ्गपरिरम्भणं भण कृतं सुधागाहनै-
स्त्वदीयदृगनुग्रहस्तदपि धिग्धिगौन्द्रं पदम् ॥ १७ ॥

दृश्यं चेन्मुखपङ्कजं तव यदि श्राव्यं तव व्याहृतं
 घ्रेयं चेन्मुखसौरभं तवं यदि स्वाद्यं तवौष्ठामृतम् ।
 स्पृश्यं चेत्कुचयोर्युगं तव परं घ्येयं मुरूपं तव
 त्वं सर्वेन्द्रियवागुरेव विषयः कस्येन्द्रियस्यासि न ॥ १८ ॥
 लक्ष्मणस्यैतौ ।

अथ रत्नप्रशंसा—

नरैर्विफलजन्मभिर्गिरिदरी न किं सेव्यते
 न चेच्छूषणगोचरीभवति जातुचिज्जन्मनि ।
 फपोतरवमाधुरीविरचनानुकारा दरी-
 रतासहकृशोदरीवचनरीतिकाकुध्वनिः ॥ १९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ रतारम्भः—

हस्तस्नेदकपित हव यश्चन्दनक्षोदवृन्दै-
 रालिप्तोऽलंकृतपरिसरः फुल्लकह्लारहारैः ।
 आराधीत्यं तव नवकुरङ्गाक्षि वक्षोजशम्भुः
 साक्षात्कारं तदपि न दिशत्येष किं वा करोमि ॥ २० ॥
 कान्ते नितान्तं दयिताकुचान्तचोलाश्रलं कर्षति हर्षमुग्धे ।
 बभार बाला नमितास्यहास्यलेशापदेशादपरं निचोलम् ॥ २१ ॥
 (लक्ष्मणस्यैतौ)

उरोरुहाम्भोरुहदर्शनाय विमुञ्चतः कञ्चुकबन्धनानि ।
 आनन्दनीराकुललोचनस्य प्रियस्य जातो विफलः प्रयासः ॥ २२ ॥
 कान्ते कलितचोलान्ते दीपे वैरिणि दिप्यति ।
 आसीदसितपद्माक्ष्याः पक्षो नयनमुद्रणम् ॥ २३ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

दृशा सपदि भीलितं दशनरोचिषा निर्गतं
 करेण परिवेषितं बलयकैरथाक्रन्दितम् ।

प्रियेण हरिणीदृशो दशनखण्ड्यमानेऽधरे

परव्यसनकातराः किमिव कुर्वतां साधवः ॥ २४ ॥

(कस्यापि)

अथ रतम्—

आकाशे नटनं सरोरुहयुगे मञ्जीरमञ्जुध्वनिः

शीतांशौ कलकूजितं किसलये पीयूषपानोत्सवः ।

स्वर्णक्षोणिधरे नखात्परिमवो ध्वान्ते कराकर्षणं

रम्भायां रसना रवस्तरुणयोः पुण्यानि मन्यामहे ॥ २५ ॥

हारलुब्धयति कङ्कणं निपतति सकौमुदी क्लिश्यति

ध्वान्तं धावति सीत्करोति रजनीजानिर्वली भज्यति (?) ।

काञ्ची क्षुभ्यति काञ्चनक्षितिधरे किं च क्षतं चञ्चति

प्रारम्भे मदनाहवस्य विजयी देवो मनोभूरभूत् ॥ २६ ॥

(मानुकरस्यैतौ)

संन्यासमाय काञ्ची जहौ दुकूलं कलत्रमबलायाः ।

विससर्ज रागमधरो मुक्तिमुरीचकिरे चिकुराः ॥ २७ ॥

(कस्यापि)

नैया वेगं मृदुतरतनुस्तावकीनं विसोढुं

शक्ता नैनां चपल नितरां खेदयेन्दीवराक्षीम् ।

रत्यभ्यासं विदधत इति प्राणनाथस्य गत्वा

कर्णोपान्ते निमृतनिमृतं नूपुरं शंसतीव ॥ २८ ॥

(धूर्तस्य)

रतिरभसनितान्तश्चान्तकान्ताकुचान्त-

श्चलदमलकराग्रा नाभिदेशेष्वधो वा ।

स्मितमधुरमुखीनां हीणनेत्रोत्पलाना-

मधरमधु वधूनां भाग्यवन्तः पिबन्ति ॥ २९ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

मज्जन्त्या रससिन्धौ किं किं न कृतं तया मुदृशा ।

विधृताः प्रियस्य केशाः कण्ठे लभं मुजे वलितम् ॥ ३० ॥

(वाणीविलासस्य)

पत्युः प्रवृत्तस्य रतौ जिगीषावचो निशम्यापि न किञ्चिदूचे ।

कलावती किंतु विहस्य तस्य कपोलयोः स्वेदमपाचकार ॥ ३१ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ विपरीतम्—

प्रशान्ते नूपुरारावे श्रूयते मेखलाध्वनिः ।

कान्ते नूनं रतश्रान्ते कामिनी पुरुषायते ॥ ३२ ॥

(कस्यापि)

विहायसि विहारिणी भवतु नाम सौदामनी

सुमेरुशिखरादिधः पततु नाम मन्दाकिनी ।

इदे तु मंहदद्भुतं यदयमेत्य भूमीतलं

नमन्नमृतदीधितिः कमलसारमाकर्षति ॥ ३३ ॥

(कस्यापि)

मधुर्पान्समुल्लसत्प्रवालं चलहेमाचलकान्तिभिर्जटालम् ।

विधुनिष्पतदन्धकारजालं शुभकालं न पुनर्विलोकयामः ॥ ३४ ॥

साक्षादभूत्स्वयंभूरथ मुक्तास्तिमिरनिकरभराः ।

प्रणनाम शीतरोचिःस्तवपाठं मेखला विदधे ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पपात मेरोः मुरसिन्धुधारा ववर्य तारागणमन्धकारः ।

नभूव भृङ्गावलिरप्यकम्पा शशाम शम्पालतिकाविलासः ॥ ३६ ॥

(कवीन्द्रस्य)

बलत्कुचं व्याकुलकेशपाशं स्विद्यन्मुखं स्वीकृतमन्दहासम् ।

पुण्यातिरेकात्पुरुषा लभन्ते पुंभावमम्भोरुहलोचनानाम् ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

पपात गङ्गा हरमौलिसङ्कादन्यं तमो जातमपेतबन्धम् ।
तडिलता चञ्चलतामहासीदस्पन्दभासीदरविन्दयुग्मम् ॥ ३८ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अथ रतावसानम्—

मत्तेभकुम्भपरिणाहिनि कुङ्कुमाद्रं
फान्तापयोधरयुगे रतिस्नेदसिन्धुः ।
वक्षो निधाय भुजपञ्जरमध्यवर्ती
धन्यः क्षपां क्षपयति क्षणलब्धनिद्रः ॥ ३९ ॥
(भर्तृहरेः)

शान्ते मन्मथसंगरे रणमृतां सत्कारमातन्वती
वासोदाज्जघनस्य पीनकुचयोर्हारं श्रुतेः कुण्डलम् ।
बिम्बोष्ठस्य च वीटिकां सुनयना पञ्चां रणनूपुरौ
पृष्ठालम्बिनि केशपाशनिचये युक्तोऽभिवन्धक्रमः ॥ ४० ॥
(कल्याणि)

कामसंगरविधौ मृगीदृशः प्रौढपौरुषधरे पयोधरे ।
स्वेदराजिरुदियाय सर्वतः पुष्पवृष्टिरिव पुष्पधन्वनः ॥ ४१ ॥

अथ रताशंसनम्—

उक्तं यत्कृपणं वचो विरचितो मूयान्वसूनां व्ययः
सोढाः किं च वियोगवज्रततयो दूती मुहुः प्रेषिता ।
बद्धोऽयं प्रणयाञ्जलिर्विनिहिते बाष्पाम्बुधौते दृशौ
निष्पीयाधरपल्लवं मृगदृशः सर्वं सखे विस्मृतम् ॥ ४२ ॥
(भानुकरस्यैतौ)

अथ रतनिद्रा—

मिश्रितोरु मिलिताघरं मिथः स्वप्नवीक्षितपरस्परक्रियम् ।
तौ ततोऽनु परिरम्भसंपुटे पीडनां विदधतौ निनिद्रतुः ॥ ४३ ॥
(श्रीहर्षस्य)

इति श्रीआहोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायामष्टमोऽध्यायः ॥

नवमो व्यापारः ।

अथ प्रभातानुनयः—

गतप्राया रात्रिः शशिमुखि शशी शीर्यत इव
 प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव ।
 प्रणामान्तो मानस्तदपि न जहासि कुधमहो
 कुचप्रत्यासक्त्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम् ॥ १ ॥
 क्षीणांशुः शशलाञ्छनः शशिमुखि क्षीणो न कोपस्तव
 स्मेरं पश्यवन् मनागपि न ते स्मेरं मुक्ताम्भोरुहम् ।
 पीतं श्रोत्रपुटेन पट्टदरुतं पीतं न ते जल्पितं
 रक्ता पूर्वदिगङ्गना रविकरैर्नाद्यापि रक्तासि किम् ॥ २ ॥
 (कस्याप्येतौ)

अथ वायुः—

उत्सार्य कुन्तलमपास्य दुकूलमूल-
 मुज्जाम्य बाहुलतिकामलसास्तरुण्यः ।
 स्नेदान्मुसिकतनवः स्पृहयन्ति वस्मै
 तस्मै नमः सुकृतिने मलयानिलाय ॥ ३ ॥
 वासो विधूय स्तनयोरमुप्याः
 कपोलकीर्णा कवरीमुदस्य ।
 अवारितः प्रोञ्छति वारिधारां
 मुखे मृगाक्ष्याः सुकृती समीरः ॥ ४ ॥
 शब्दानिलोऽपि सुरतान्तनितान्ततान्त-
 कान्ताकुचान्तधनधर्ममपाकरोति ।
 भूयोऽमिलापजननी पुनरन्यथैव
 स्नेदापनोदनकला मलयानिलस्य ॥ ५ ॥
 भिक्षितकमलकुटुम्भाः शिक्षितगजगामिनीगतयः ।
 लक्षितहिमगिरिपादाः प्रातरमी मातरिस्थानः ॥ ६ ॥

लतां पुष्पवतीं स्पृष्ट्वा स्नातो विमलवारिणा ।

पुनः संपर्कशङ्कीव गन्दं चरति मारुतः ॥ ७ ॥

लवङ्गलतिकामङ्गदयालुर्दक्षिणानिलः ।

कथमुन्मूलयत्येष मानिनीमानपर्वतान् ॥ ८ ॥

(केषामप्येते)

चोलाङ्गनाकुचनिचोलतलानुलीनो

द्राक्षेरलीतरलकुन्तलकम्पनोत्कः(लोलः) ।

लाटीललाटतटशोषणमानसोऽयं

कुल्लारविन्दवनबन्धुरूपैति वायुः ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ प्रभातम्—

धिरलविरलीभूतास्ताराः कलौ सुजना इव

व्यपसरति च ध्वान्तं चित्तात्सत्तामिव दुर्जनः ।

मन इव मुनेः सर्वत्रापि प्रसन्नममूर्त्तभो

विगलति निशा क्षिप्रं लक्ष्मीरनुद्यमिनामिव ॥ १० ॥

अमूर्त्ताची पिङ्गा रसपतिरिव प्राश्य कनकं

गतच्छायश्चन्द्रो बुधजन इव ग्राम्यसदसि ।

क्षणं क्षीणास्तारा नृपतय इवानुद्यमपरा

न दीपा राजन्ते द्रविणरहितानामिव गुणाः ॥ ११ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

अयमुदयमहीमृन्मूर्ध्नि पाणिं गृहीत्वा

दिवसपतिरहौपीदिन्दुपादान्हवीषि ।

अरुणकिरणवह्नौ कन्यका पौरूहती

हरिदपि किमकार्षीत्तारकालाजहोमम् ॥ १२ ॥

सन्निगृह्य चिकुरं तमोमयं यामिनी तदनु केलिविच्युतम् ।

कुर्वती श्रवसि चन्द्रमण्डलं कुण्डलं गगनकुलमुज्जति ॥ १३ ॥

(मानुकरस्यैती)

अस्वाध्यायः पिकानां मदनमस्तसमारम्भस्याधिभासो
 निद्राया जन्मलग्नं किमपि भधुलिहं कोऽपि दुर्मिक्षकालः ।
 विष्टिर्यात्रोत्सुकानां मलयजमरुतां पान्यकान्ताकृतान्तः
 प्रालेयोन्मूलमूलं समजनि समयः कश्चिदौत्पातिकोऽयम् ॥ २१ ॥
 (वाहिनीपतेः)

बहद्वहलमारुतप्रसरदमिस्त्रण्डैरिव
 स्फुरद्द्युमणिमण्डलधुतिवितानकैस्तापिता ।
 विसारि वपुरात्मनः सपदि वासरश्रीरिमं
 चलन्मरुमरीचिकानिचयपल्लवेनाञ्चति ॥ २२ ॥
 भानोः पादैर्दहनपरुपैर्दक्षमानान्तराणा-
 मुक्तामन्तः किल विटपिनां प्राणपिण्डा इवामी ।
 गाढोदन्याकुलितमनसो भिलचञ्चुपुटान्ताः
 कोकूयन्ते विहगशिशवः कोटराणां मुत्सेषु ॥ २३ ॥
 (एतौ गणपतेः)

अथ जलज्जीवा—

अंसेन कर्णं चिबुकेन वक्षः फरद्वयेनाक्षि तिरोदधानः ।
 संताडयामास हरिः समेताश्चकोरनेत्राश्चुलकोदकेन ॥ २४ ॥
 परस्परालेपवशंगतानि द्वन्द्वानि विहस्य काचित् ।
 संताड्य पद्मैः स्खलदंशुकान्ता कृष्णाय कान्ता कथयां वभूव ॥ २५ ॥
 ह्रिया सखीनां हरिरम्बुजार्क्षीं गिरा परावर्तयितुं न सेहे ।
 अनङ्गलेखाक्षरसंगतेन संताडयामास सरोरुहेण ॥ २६ ॥
 (गणपतेरेतौ)

आत्तमात्तमधिकान्तमुक्षितुं कातरा शफरशङ्किनी जहौ ।
 अञ्जलौ जलमधीरलोचना ॥ २७ ॥
 अविरतमिदमम्भः स्वेच्छमोच्छालमन्त्या
 कमलमुकुलकान्तोत्तानहस्तद्वयेन ।

परिकलित इवार्थः कामवाणातिथिम्यः

सलिलमिव वितीर्णं बाललीलामुखाय ॥ २८ ॥

(कस्यापि)

अथ वनक्रीडा—

पतितैः शिरीषरजसां निकरैः कलुषीकृतं नयननीररुहम् ।

हरिणा हिरण्यरमणीयतनोर्मुखमारुतैः किमपि शीतलितम् ॥ २९ ॥

अवलाकृतिं समुपकल्प्य शनैर्वजता

कपटेन कैटमजिता हसता वनिता धृता करसरोरुहयोः ॥ ३० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

असंख्यपुष्पोऽपि मनोमवस्य पञ्चैव बाणार्थमयं ददाति ।

एवं कदर्यत्वमिवावधार्य सर्वस्वमग्राहि मधोर्वधूमिः ॥ ३१ ॥

(विह्वलस्य)

पाणौ पद्माधिया मधूककुसुमभ्रान्त्या तथा गण्डयो-

नीलेन्दीवरशङ्कया नयनयोर्बन्धूकबुद्ध्याधरे ।

लीयन्ते कवरीभरे निजकुले व्यामोहजातस्पृहा

दुर्वारा मधुपाः कियन्ति तरुणि स्थानानि रक्षिष्यसि ॥ ३२ ॥

(अचलस्य)

रम्भोरु देहपरिरम्भभरैस्त्वदीर्य-

र्यन्मानसं विकृतिमेति न चित्रमेतत् ।

स्वत्पादपद्मलवसङ्गवशादशोको

रोमाञ्चमञ्चति दलत्कलिकाललेन ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ भ्रमरीनृत्यक्रीडा—

अमात्यकीर्णे भ्रमरीषु किञ्चिच्छेलाञ्चले चञ्चललोचनानाम् ।

कुचौ कदाचिज्जघनं युवानो विलोक्य साफल्यमवापुरक्ष्णाम् ॥ ३४ ॥

परिभ्रमन्त्या भ्रमरीविनोदे नितम्बबिम्बादिगलदुकूलम् ।

विलोक्य कस्याश्चन कीमलाङ्गयाः पुंभावमन्याः सुदृशो ववाब्धुः ॥ ३५ ॥
(गुणाकरस्यैतौ)

चेलञ्चलेन चलहारलताप्रकाण्डै-

र्वेणीगुणेन च चलद्वलयीकृतेन ।

हेलाहितअमरकअममण्डलीभि-

श्छत्रत्रयं रचयतीव चिरं नतम्रूः ॥ ३६ ॥

मुक्ते काञ्चनकुण्डले निपतिते माणिक्यमूपामणौ

कीर्णे केलिसरोरुहे विगलिते मुक्ताकलापे सति ।

निःश्वस्याम्बुजलोचना अमरिकानृत्यावसाने पुनः

प्राणेशच्युतिशङ्कयेव हृदये हस्तारविन्दं ददौ ॥ ३७ ॥

अलक्षितकुचामोर्गं अमन्ती नृत्यभूमिषु ।

सरोषापि सरोमाक्षी न लक्ष्यीक्रियते शैरैः ॥ ३८ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

अथ कन्दुकक्रीडा—

सानन्दकन्दुकविहारविधौ बध्नां

दोलायमानमणिकङ्कणनिकणेन ।

उड्डायितेषु युवचित्तविहङ्गमेषु

द्वयेना इव स्मृतिमुबो विशिखा विलम्बाः ॥ ३९ ॥

अमञ्चरणपल्लवकणदमन्दमञ्जीरकं

परिस्त्रलदुरोरुहस्तचककम्पमानांशुकम् ।

रणत्कनकमेखलं करसरोरुहाभ्यां पुरः

पतन्तमपराददे कुसुमकन्दुकं सुन्दरी ॥ ४० ॥

(एतौ गणपतेः)

पयोधराकारधरो हि कन्दुकः फरेण रोषादिव ताड्यते मुहुः ।

इतीव नेत्राकृति भीतमुत्पलं तस्याः प्रसादाय पपात पादयोः ॥ ४१ ॥

(कालिदासस्य)

अथ दृष्ट्वालीनक्रीडा—

नैतस्याः प्रसूतिद्वयेन सरले शक्ये पिधातुं दृशौ
सर्वत्रैव विलोक्यते मुखशशिज्योत्स्नावितानैरियम् ।

इत्थं बालतया सस्त्रीभिरसकृद्दृष्ट्वालीनकेलिषु
व्या(पि)द्धा रजनीमुखे च नयने स्वे गर्हते कन्यका ॥ ४२ ॥
(कस्यापि)

एनं विहाय तुलसीविपिनोपकण्ठं
गोप्यः परत्र नयनाम्बुजमीलनानि ।
कुर्वन्तु किंतु तुलसीदलनीलमासं
का वा मुकुन्दमनुविन्दतु लीनमस्मिन् ॥ ४३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ हिन्दोलक्रीडा—

दृशा विदधिरे दिशः कमलराजिनीराजिताः
कृता हसितरोचिषा हरिति चन्द्रिकावृष्टयः ।

अकारि हरिणीदृशः प्रबलदण्डकप्रस्फुर-
द्वपुर्विपुलरोचिषा वियति विद्युतां विभ्रमः ॥ ४४ ॥
(गणपतेः)

उन्नम्य दूरं मुहुरानमन्त्यः कान्ताः श्रुधीभूतनितम्बविम्बाः ।
दोलाविलासेन जितधमत्वात्मकर्षमापुः पुरुषायितेषु ॥ ४५ ॥
(विहणस्य)

दोलायमानाः प्रियनुद्यमानहिन्दोलया बालचमूरुन्नेत्राः ।
प्रसारिदेहद्युतिगारिपूरे वितेनिरे विप्लवनानि भूयः ॥ ४६ ॥
(गदाधरस्य)

अथ संध्या—

अस्ताद्रिलम्बिरविविम्बतयोदयाद्रि-
चूडोन्मिषत्सकलचन्द्रतया च सायम् ।

संध्याप्रनृत्तहरहस्तगृहीतकांस्य-

तालद्वयेव समलक्ष्यत नाकलक्ष्मीः ॥ ४७ ॥

(रत्नाकरस्य)

उच्चैस्तरादम्बरशैलमौलेश्च्युतो रविर्गैरिकगण्डशैलः ।

तस्यैव पातेन विचूर्णितस्य संध्यारजोराजिरिवोज्जिहीते ॥ ४८ ॥

(श्रीहर्षस्य)

प्रकटयति वियोगिप्रेयसीविप्रतीपो

भुवनविजययात्राडम्बरं शम्बरारिः ।

यदिह जयति संध्याकैतवेनासमन्ता-

दरुणघसनलेखा काचिदेपा'लसन्ती ॥ ४९ ॥

मृगाङ्कमागतं वीक्ष्य संध्या कुलवधूरिव ।

दीपलेखामिपादेया निर्विवेश निकेतनम् ॥ ५० ॥

(भानुकरस्य)

अथान्धकारः—

चरमगिरिनिकुलमुष्णभानौ भगवति गच्छति विप्रयोगसिन्धौ ।

मुकुलितनयनाम्बुजा धरित्री वपुषि नभार तमांसि शैवलानि ॥ ५१ ॥

(भानुकरस्य)

इदं नभसि भीषणभ्रमदुल्लङ्घकोलाहलै-

निंशाचरविलासिनीनिवहदत्तनेत्रोत्सवम् ।

परिस्फुरति निर्मलप्रचुरपङ्कममोलस-

द्वराहकुलमांसलप्रबलबन्धमन्थं तमः ॥ ५२ ॥

(वासुदेवस्य)

अथाभिसारिका—

गाढे तमसि सरन्ती पथि स्त्रलन्ती मुषिच्छले मुग्धा ।

अवलम्बनाथ चाराद्वारासु करं प्रसारयति ॥ ५३ ॥

चित्रोत्प्रीर्णादपि विषधराद्रीतिमाजो निशायां

किं नु ब्रूमस्त्वदभिसरणे साहसं नाथ तस्याः ।

ध्वान्ते यान्त्या यदतिनिभृतं बालयात्मप्रकाश-

त्रासात्पाणिः पथि फणिफणारत्नरोधी व्यधायि ॥ ५४ ॥

(कस्यापि) [हरिहरस्य]

रभसादभिसर्तुमुद्यतानां वनितानां सखि वारिदो विवस्वान् ।

रजनी दिवसोऽन्धकारमर्चिर्विपिनं वेदम विमार्ग एव मार्गः ॥ ५५ ॥

(भानुकरस्य)

गन्तुं यदि व्यवसितासि धनान्धकारे

नीलाञ्चलेन तनुमावृणु मुग्धशीले ।

विद्युलता यदि पथि प्रतिरोधिनी स्या-

दमावृतैव कनकद्रवगौरि गच्छेः ॥ ५६ ॥

(कस्यापि)

मन्दं निषेहि चरणौ परिषेहि नीलं

चासः पिषेहि वलयावलिमञ्चलेन ।

भा जल्प साहसिनि शारदचन्द्रकान्त-

दन्तांशवस्तव तमांसि समापयन्ति ॥ ५७ ॥

(कस्यापि)

एकत्र कौलमतभङ्गशङ्का विदग्धताभङ्गभयं परत्र ।

इत्याकुलानां कुलकामिनीनां गतागतैरेव गता त्रियामा ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृती पद्यरचनावो नवमो व्यापारः ॥

दशमो व्यापारः ।

अथ चक्रवाकावस्था—

वापीतोयं तटरुहवनं पद्मिनीपद्मशय्या

चन्द्रालोको विकचकुसुदामोदहृद्यः समीरः ।

यत्रैतेऽपि प्रियविरहिणो दाहिनश्चक्रनाम्न-

स्तत्रोपायः क इव भवतु प्राणसंघारणे यः ॥ १ ॥

मङ्क्त्वा भोक्तुं न भुङ्क्ते कुटिलविसलताकोटिमिन्दोर्वितर्का-
चाराकारास्तृपार्तः पिवति न पयसां विमुषः पन्नसंस्थाः ।

छायामम्भोरुहाणामलिकुलमलिनां वेत्ति संध्यामसंध्यां
कान्ताविश्लेषभीरुर्दिनमपि रजनीं मन्यते चक्रवाकः ॥ २ ॥

[एष रुद्रस्य] (कयोरप्येतौ)

अथ तारावर्णनम्—

सिन्धोः सुधांशुशकलं परिगृह्य संध्या

क्षेमंकरी निपतिताम्बरमूरुहाग्रे ।

चक्षुपुटेन चपलेन तथा विकीर्णा-

स्तारामिषेण पतिता इव पक्षस्त्रण्डाः ॥ ३ ॥

व्योम्नि प्राङ्गणसीम्नि सांध्यकिरणं विस्तार्य चेलाञ्चलं

ध्यान्तैः कर्मणपांसुभिश्च जगतां द्राघ्योहयित्वा दृशौ ।

ताराशौक्तिफमौक्तिकानि विहगश्रेणीरवच्छन्नना

जिजिंकृत्य च मायिकः स्मरनटो वक्राद्वह्निर्वर्पति ॥ ४ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

इयं संध्यातल्पं किमकृत.....

प्रवालैर्माहेन्द्री हरिदहिमभानोर्विरहिता ।

यदेपां वृन्तेषु स्फुरदमलमुक्ताचयरुचिः

[स्फुटं] वारां विन्दुप्रकर इव तारापरिकरः ॥ ५ ॥

अम्बरविपिनमिदानीं तिमिरवराहोऽवगाहते जलधेः ।

रोमसु यदस्य लग्नास्तारकजलबिन्दवो भान्ति ॥ ६ ॥

(गणपतेः)

निशाधिनाथस्य करावमर्षात्संमीलिताम्भोरुहलोचनायाः ।

निशाङ्गनायाः कपटादुद्भूतां किं खेदबिन्दूत्कर आविरासीत् ॥ ७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ चन्द्रः—

गगनविपिनसिंहः कामभूपालपत्रं

निखिलदिग्बलानां कन्दुकं कीडनाय ।

मणिरिव रतिभर्तुः कर्मणः पार्वणोऽयं

जयति कुमुदबन्धुर्वन्धुरश्चन्द्रविम्बः ॥ ८ ॥

(लक्ष्मणस्य)

निर्वेदः सरसीरुहस्य महिलाकोपस्य काशीपदं

सिद्धान्तो मकरध्वजस्य तिमिरस्तोमस्य होमस्थली ।

प्रव्रज्या कुमुदकुमस्य कुलटावाटस्य पाटञ्चरः

पूर्वाद्वैरुदियाय विभ्रमवणिग्देवः क्षपाकामुकः ॥ ९ ॥

नभोलताकुञ्जमुपागतायाः प्रमोदपर्याकुलतारकायाः ।

निशाङ्गनायाः स्फुरता करेण शशी तमःकञ्चुकमुन्मुमोच ॥ १० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

ताराक्षतान्मविकिरन्कलकण्ठनादा-

न्मन्त्राक्षराणि निगदन्कुमुमेपुरेपः ।

लाभाय वासरमणेर्मुपितस्य सायं

संचारयत्यमृतदीधितिकांस्यपात्रम् ॥ ११ ॥

दिग्बालाकरकन्दुकः स्मरवधूतीमन्तमुक्तामणिः

कामक्षोणिपतेर्विहारबलभीनिर्व्यूहपारावतः ।

हृद्भ्योन्नि विकीर्णतारकमणिः श्यामावणिक्सुभ्रुवः

स्फारः स्फाटिकसंपुटः कुमुदिनीकान्तोऽयमुन्मीलति ॥ १२ ॥

(गणपतेरेतौ)

अथ सकलङ्कचन्द्रः—

अयं पुरः पार्वणशर्वरीशः किं दर्पणोऽयं रजनीरमण्याः ।

यतस्तदीयं प्रतिविम्बमस्मिन्संलक्ष्यते लाञ्छनकैतवेन ॥ १३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

प्रदोषमातङ्गमनङ्गदेवस्तुङ्गं समारुह्य समागतोऽयम् ।

सिन्दूरिते तस्य सुधांशुकुम्भे किमङ्कुशो लक्ष्मणिपेण दत्तः ॥ १४ ॥

(गणपतेः)

ख्याता वयं समधुपा मधुकोशवत्य-

श्चन्द्रः प्रसारितकरो द्विजराज एषः ।

अस्मत्समागमकृतोऽस्य पुनर्द्वितीयो

मा भूत्फलङ्क इति संकुचिता नलिन्यः ॥ १५ ॥

(कस्यापि)

मम प्रियां कैरविणीं करेण संतापयामास दिनाधिनाथः ।

इतीव दुःखैर्विकलः कलावान्पौ विषं लक्ष्मणिपेण सद्यः ॥ १६ ॥

(कस्यापि)

फलाधिनाथानयनाय सायं कुमुद्वतीप्रेषित एव भृङ्गः ।

किमिन्दुनालिङ्ग्य सरागमङ्के कृतः कलङ्कभ्रममातनोति ॥ १७ ॥

(वाणीविलासस्य)

समस्तापास्तांशौ विरतिमहिमांशौ परिगते

दिवाभीतः शीतद्युतिरयमुदीतः समुदभूत् ।

..... यदपिबल्कुक्षिपु गता-

स्त एवाङ्के बीजं शशिनि किल शङ्के समभवन् ॥ १८ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ हर्म्यम्—

निपीय पीयूषमयूखबिम्बे सुधाशरावप्रतिमे कपोताः ।

नक्षत्रमालासु कणभ्रमेण [चिरेण] चञ्चुं चपलाः क्षिपन्ति ॥ १९ ॥

यत्रालसा हरिणशावदृशो विहार-

पर्यस्तहारमणिमेदुरकेलितल्पाः ।

तारासु सौधशिखराञ्चलचुम्बिनीषु

मुक्ताभ्रमेण करपलवमर्पयन्ति ॥ २० ॥

(एतौ गणपतेः)

मितौ मितौ प्रतिफलगतं भालसिन्दूरपूरं
दृष्ट्वा दृष्ट्वा कमलनयना केलिदीपभ्रमेण ।

कान्ते चोलं हरति हरितं लोलमालोकयन्ती

यत्र प्रच्छादयति सहसा पाणिपङ्केरुहेण ॥ २१ ॥

(भानुकरस्य)

स्फुरत्तुपारांशुमरीचिजालैर्विनिद्धुताः स्फटिकसौधपङ्क्तीः ।

आरुह्य नार्यः क्षणदासु यस्यां नभोगता देव्य इव व्यराजन् ॥ २२ ॥

(माधकवेः)

यदीयसौधस्फुरदिन्द्रनीलगवाक्षकुक्षिं प्रविशन्हिमांशुः ।

उत्कंधराणामनिशं नराणामिन्दूपरागभ्रममातनोति ॥ २३ ॥

इति श्रीभास्वेलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां दशमो व्यापारः ।

एकादशो व्यापारः ।

यतो द्वये निरूप्यत्वं शृङ्गारस्य रसस्य तु ।

अतः संक्षेपतः कुर्वे नायकानां निरूपणम् ॥ १ ॥

अथानुकूलो नायकः—

अरुणदलनलिन्या स्निग्धपादारविन्दा

कठिनतरधरण्यां यान्यकस्मात्स्खलन्ती ।

अवनि तव मुतेयं पादविन्यासदेशे

त्यज निजकठिनत्वं जानकी यात्यरण्यम् ॥ २ ॥

(महानाटकात् ।)

आत्मीयं चरणं दधाति पुरतो निमोक्षतायां भुवि

स्वीयेनैव करेण कर्षति तरोः पुष्पं श्रमाशङ्कया ।

तल्पे किं च मृगतृचाविरचिते निद्राति भागैर्निजै-

रन्तःप्रेमभरालसां प्रियतमामङ्गे दधानो हरः ॥ ३ ॥

वक्षोजद्वयशीलेनऽपि नखरातङ्कं न (हि) शङ्के तव

स्याद्विम्बाधरचुम्बनेऽपि दशनच्छेदेन खेदोदयः ।

आश्लेषेऽपि वपुर्लता तव पुनर्भिचेत रोमाङ्कुरा-

दित्यं पद्मविलोचने विरमति त्रासो न दासस्य मे ॥ ४ ॥

अथ दक्षिणनायकः—

एतत्पुरः स्फुरति पद्मदृशां सहस्र-

मक्षिद्वयं कथय कुत्र निवेशयामि ।

इत्याकलय्य नयनान्बुरुहे निमील्य

रोमाञ्चितेन वपुषा स्थितमच्युतेन ॥ ५ ॥

चिरादुपेतः प्रथमं प्रदानं विचिन्त्य कर्तुं न पतिः शशाक ।

मध्येसखं केवलमङ्गनानां संयोजयामास विभूषणानि ॥ ६ ॥

(एते भानुकरस्य)

दृष्ट्वा पतिः पद्मदृशां सहस्रं दातुं न कस्यैचिदलं तदेकम् ।

एकैकमुत्कृत्य कृती दिदेश सर्वाणि पत्राणि सहस्रपत्रात् ॥ ७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ धृष्टो नायकः—

व.....हरकिसलयो.....

स्वापं ज्ञात्वा पुनरुपगतो दूरतो दत्तदृष्टिः ।

तत्पुपान्ते कनकवलयं भ्रष्टमन्वेपयन्त्या

दृष्टो धृष्टः पुनरपि मया पार्श्वे एव प्रसुप्तः ॥ ८ ॥

एतस्य रहसि वक्षसि सरसिजपत्रेण ताडितस्यापि ।

वयितस्य वीक्ष्य हसितं प्रियसखि हसितं ममाप्यासीत् ॥ ९ ॥

अथ धूर्तो नायकः—

धुन्वन्त्याः करपल्लवं मृगदृशो जातागसः प्रेयसो

वक्त्राम्भोरुहहेमकङ्कणमणिस्पर्शं समुन्मीलति ।

चक्षुर्विघ्नितमित्युदीर्य सहसा धूर्तेन तचेष्टितं

तस्यौ येन चिराय सैव शिरसा नम्रेण शातोदरी ॥ १० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ मानी नायकः—

संत्यक्तजल्पे परिवृचवक्त्रे कृतागसि प्रेयसि तल्पमुत्ते ।

बाला मुहुर्न्यस्यति बाहुपाशं मुहुर्मुखं संमुखमातनोति ॥ ११ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथानभिज्ञो नायकः—

शून्ये सद्गनि योजिता बहुविधा भङ्गिर्वनं निर्जनं

पुष्पव्याजमुपेत्य निर्गतमथ स्फारीकृता दृष्टयः ।

ताम्बूलाहरणच्छलेन विहितौ व्यक्तौ च वक्षोरुहा-

वेतेनापि न वेत्ति दूति कियता यत्नेन संशास्यति ॥ १२ ॥

पर्यस्तालकगण्डपालिवदनान्भोजं मया चुम्बितं

प्रत्यङ्गं करपल्लवेन पुलकश्रेणिस्पृशा लालितम् ।

दोर्भ्यां तस्य कठोरकङ्कणरवं दोर्बलिरालिङ्गिता

निद्रात्येव मुहुस्तथापि दयितः कसौ किमाचक्ष्महे ॥ १३ ॥

अथ शिशुनायकः—

अनवाप्तवयसि रहसि पर्यङ्कमागते जयति ।

मदचपललोचनाया मूकस्वप्नायितो भावः ॥ १४ ॥

प्रियतममजातयौवनमन्तः परिचिन्त्य पद्माक्षी ।

अङ्गानि भूषयन्तीमालीमालीदयौवना हसति ॥ १५ ॥

(भानुकरस्य)

संमुखं मुखविधुं न चुम्बतः कुर्वतो न च कुचे करार्पणम् ।

पत्युरल्पवयसोऽन्तिके गता दैवमेव विनिनिन्द सुन्दरी ॥ १६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ वृद्धनायकः—

उद्भिदुरं स्तनवदनं लोचनमलिगर्वभोचनं सुदृशः ।

दृष्ट्वा विगतविचारं घातारं निन्दति स्वविरः ॥ १७ ॥

(भानुकरस्य)

अचिन्तनीया विधिवच्चनेयं यदम्बुजाक्षी स्वविरस्य भर्तुः ।
स्वयं समादाय करं निधाय वक्षोजयुग्मे स्वपिति श्वसन्ती ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथाविदग्धनायकः—

क्रीडासु सग्रीडमहो विलासानीवीनिरोधे निहितं मृगाक्ष्या ।
कराम्बुजं वीक्ष्य पतिः सरोपो ददौ ललाटे सुदृशश्चपेटाम् ॥ १९ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ देशान्तरोपगतनायकः—

दिदृक्षमाणः क्षणमायताक्ष्या मुक्ताम्बुजं मञ्जुलमध्वनीनः ।
मुहूर्तमात्रं सुमुहूर्तकालं स वर्षकालं कलयांचकार ॥ २० ॥
निशम्य केलीभवनोपकण्ठे मञ्जीरमञ्जुध्वनिमध्वनीनः ।
यथा तथा बद्धकथावशेषं समापयामास समं सुहृद्भिः ॥ २१ ॥
(कस्यापि)
मुखं प्रियायाः समुदीक्षमाणः कान्तो दिनस्यान्तमपेक्षमाणः ।
मुहुर्मुहुर्व्योमनि तिग्मभानौ निवेशयामास विलोचनानि ॥ २२ ॥
(भानुकरस्य)

अथ पट्टतुवर्णनम् । तत्र वर्षर्तुः—

कामेन कामं प्रहिता जवेन प्रावृद् चचाल त्रिजगद्विजेतुम् ।
किं चन्द्रविम्बं दधि भक्षयन्ती संधारयन्ती हरितः शुभाय ॥ २३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ जलधरः—

शीतलादिव संत्रस्तं प्रावृषेप्यान्नमस्ततः ।
नमो बभार नीरन्ध्रं जीमूतकुलकम्बलम् ॥ २४ ॥
(सर्वदासस्य)
चलद्बलाकादशनाभिरामः परिस्रवद्धारिमदाम्बुधारः ।
आहन्यमानस्तडिदंशुकेन सरस्य दध्वान घनद्विपेन्द्रः ॥ २५ ॥
(गदाधरस्य)

वर्षासु जाता नवयौवनश्रीराशावधूः प्रौढपयोधराभूत् ।

पुष्पोद्गमोऽजायत मालतीनां बभूवुरस्पृश्यतमास्तटिन्यः ॥ २६ ॥

दशमुखभजमानिहीकः (?) स्फुरदतिघोरगभीरमेघनादः ।

अयमिह समयः पयोधराणां तुलयति रावणपत्नोपकण्ठे ॥ २७ ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

अथ घनदुर्दिनम्—

घनतरघनवृन्दच्छादिते व्योम्नि लोके

सवितुरथ हिमांशोः संकथैव व्यरंसीत् ।

रजनिदिवसभेदं मन्दवाताः शशंसुः

कुमुदकमलगन्धानाहरन्तः क्रमेण ॥ २८ ॥ (रघुपतेः)

घनतरघनवृन्दच्छादिते व्योम्नि लोके

सवितुरथ सुधांशोः संकथैव व्यरंसीत् ।

विरहमनुभवन्ती संगमं चापि भर्त्रा

रजनिदिवसभेदं चक्रवाफी शशंस ॥ २९ ॥

(अम्बष्ठस्य)

घनोद्गमे गाढतमेऽन्यकरे न कोऽपि निर्णेतुमहः शशाक ।

स्पृशन्मुहुः किंतु करेण नाभीसरोजमाभीरकुलाधिनाथः ॥ ३० ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ घनगर्जितम्—

या कामिनी सा यदि भानिनी स्यात्स्वरस्य राज्ञो ह्यपराधिनी स्यात् ।

इतीव दण्डैः किमु ताड्यतेऽसौ कादम्बिनी कामनृपस्य दक्षा ॥ ३१ ॥

चन्द्रबिम्बरविबिम्बतारकामण्डलानि घनमेघडम्बरैः ।

भक्षितानि जलदोदरेषु तद्रोदनध्वनिरिवैव गर्जितम् ॥ ३२ ॥

निद्रितस्य बत शम्बरद्विषो जागराय किमु वारिवाहकः ।

ऊर्जितं दधदतीव गर्जितं संभ्रमन्नमसि संभ्रमाद्यौ ॥ ३३ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

अथ विद्युत्—

याचितेन बहु चातकद्विजैरम्बुदेन जलदानपूर्वकम् ।

हेमयष्टिरिव दूरमीरिता संचचार रुचिरा चिरप्रभा ॥ ३४ ॥

(कविराजस्य)

क्षपां क्षामीकृत्य प्रसभमपहृत्याम्बु सरितां

प्रताप्योर्वी कृत्स्नां तरुगहनमुच्छोप्य सकलम् ।

क संप्रत्युष्णांशुर्गत इति तदन्वेपणपरा-

स्ताडिहीपालोक्ता दिशि दिशि चरन्तीव जलदाः ॥ ३५ ॥

(पाणिनेः)

अथ वर्षाविरहिणी—

मन्दं मन्दं ध्वनति जलदो बिन्दु.....वर्ष-

न्मन्दं मन्दं किरति पवनः केतकीकेसराणि ।

स्वैरं स्वैरं लसति च तडित्किंतु वाच्यं मया ते

वारंवारं वितर सखि मे जीवनं जीवनाय ॥ ३६ ॥

सहचरि परिपन्थिनं पुरस्ताज्जलधरमतकं कसरानुकारम् ।(?)

परिहर परिहार्यमाशु नोचेद्वितर जलाज्जलिमेव जीवनाय ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

अथ खद्योतः—

खद्योतपोतप्रकराः समं स्वे द्योतन्त एते द्युतिभिः प्रचण्डाः ।

पयोदसंघट्टविघट्टनस्य किं वैद्युतस्य ज्वलनस्य खण्डाः ॥ ३७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पाथोधरीयपटलेन विदारितस्य

मार्तण्डमण्डलपचेलिमदाडिमस्य ।

व्योमाङ्गणे निपतिता इव बीजपूराः

खद्योतपोतमुपमां स्फुटमावहन्ति ॥ ३८ ॥

प्राचीमहीधरशिला विनिवेशितस्य

धाराधरस्फुरदयोधनताडितस्य ।

तप्तायसस्य तपनस्य कणा विकीर्णाः

स्वद्योतपोतकपटादिव विस्फुरन्ति ॥ ३९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ हंसः—

तदमुपगतं पद्मे पद्मे निवेशितमाननं

प्रतिपुटकिनीपञ्चच्छायं मुहुर्मुहुरासितम् ।

मुहुरुपगतैरसैः कोष्णीकृता जलवीचयो

जलदमलिनां हंसेनाशां विलोक्य पिपासता ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

इति श्रीभाट्टोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायामेकादशो व्यापारः ।

द्वादशो व्यापारः ।

अथ शरत्—

स्वच्छाम्बराच्छादितसर्वगात्रा राजीवनेत्रा लसदिन्दुवक्त्रा ।

कणन्मरालव्रजनूपुराढ्या ययौ मदाल्येव शरत्तताङ्गी ॥ १ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पयोदजालजम्बालजटिला शरदङ्गना ।

अम्बरं धारयामास चन्द्रिकाचयवारिभिः ॥ २ ॥

अहो बाणस्य संधानं शरदि स्मरभूपतेः ।

अपि सोऽयं त्विषामीशः कन्याराशिमुपागतः ॥ ३ ॥

अथोत्तरस्यां दिशि स्वञ्जरीटमालोक्य कोऽपि स्मितमादधानः ।

कस्याग्निदासे स्मितचारुभासि संभावयामास विलोचनानि ॥ ४ ॥

(भानुकरस्यैते)

सीङ्गं रविस्तपति नीच इवाचिराढ्यः

शृङ्गं रुरुस्त्यजति मित्रमिवाकृति(त)जः ।

तोयं प्रसीदति मुनेरिव चित्तवृत्तिः

कामं दरिद्र इव शोपमुपैति पङ्कः ॥ ५ ॥

(भासस्य)

वान्ति कहारसुभगाः सप्तच्छदसुगन्धयः ।

वाता नवरतग्लानवधूगमनमन्थराः ॥ ६ ॥

(वाल्मीकेः)

कलमाः पाकविनम्रा मूलतलाघ्रातसुरभिकहाराः ।

पवनाकम्पितशिरसः प्रायः कुर्वन्ति परिमलश्लाघाम् ॥ ७ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

प्रबोधभाजः परमस्य पुंसो विलोचने द्वे किल मुक्तनिद्रे ।

व्यपेतपाथोद(ध)रपक्षमरोधे व्यराजतां व्योमनि पुष्पवन्तौ ॥ ८ ॥

(कविराजस्य)

चन्द्रे गते सभिग(क)तामिह कार्तिकेय-

द्यूतोत्सवं.....खेलति पञ्चबाणे (?) ।

.....

तारास्त एव परितो वियति स्फुरन्ति ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ हेमन्तः—

हेमन्तहिमनिस्पन्दमवलोक्य मनोभवम् ।

प्रहर्तुं सुभ्रुवां चेतो रविर्देवो घनुर्दधौ ॥ १० ॥

अभ्युलसन्ति विनिवारितचन्दनाना-

मेणीदृशां वपुषि कुङ्कुमपत्रलेखाः ।

अभ्यागताः करसरोजपदारविन्द-

संरक्षणाय किरणा इव शीत(तिम्भ)मानोः ॥ ११ ॥

अम्बरमेघ रमण्यै यामिन्यै वासरः प्रेयान् ।

अधिकं ददौ निजाद्वादथ संकुचितः स्वयं तस्यौ ॥ १२ ॥

(मानुकरस्यैतौ)

लज्जा प्रौढमृगीदृशामिव नवस्त्रीणां रतेच्छा इव

सैरिण्या नियमा इव स्मितरुचः कुल्याङ्गनानामिव ।

दम्पत्योः कलहा इव प्रणयिता वाराङ्गनानामिव

प्रादुर्भूय तिरोभवन्ति सहसा हैमन्तिका वासराः ॥ १३ ॥

(कविकङ्कणस्य)

अपि दिनमणिरेषः क्लेशितः शीतसङ्घै-

रथ निशि निजभार्या गाढमालिङ्ग्य दोर्म्याम् ।

स्वपिति पुनरुदेतुं सालसाङ्गस्तु तस्मा-

त्किमु न भवतु दीर्घा यामिनी कामिनीयम् ॥ १४ ॥

दधत्यधरचुम्बनं नयनपङ्कजं मुद्रय-

त्यमन्दपुलकं मनागमलमङ्गमालिङ्गते ।

विचालयति चालकं चपललोचनानां दृष्टा-

त्तनोत्यविनयं मरुत्प्रिय इवैष हैमन्तिकः ॥ १५ ॥

कामिनो हन्त हैमन्तनिशि शीतज्वरातुराः ।

जीवन्ति हरिणाक्षीणां वक्षोजाश्लेषरक्षिताः ॥ १६ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

हे हैमन्त स्मरिष्यामि त्वय्यतीते गुणद्वयम् ।

अयत्नशीतलं वारि निशाथ सुरतक्षमाः ॥ १७ ॥

हसन्तीं वा हसन्तीं वा हसन्तीं वामलोचनाम् ।

हेमन्ते थे न सेवन्ते ते नूनं दैववञ्चिताः ॥ १८ ॥

(कथोरपि)

अथ शिशिरः—

तुषारभारविक्षुण्णं प्रेक्ष्य पङ्कजकाननम् ।

पङ्केरुहदृशः शङ्के पाणिः कम्पमविन्दत ॥ १९ ॥

आचुम्ब्य विम्बाधरमङ्गवलि-

मालिङ्ग्य संस्पृश्य कपोलपालीम् ।

श्रीखण्डमादाय करेण कान्तः

संत्रासयामास सरोरुहाक्षीम् ॥ २० ॥

एते समुलसद्भासो राजन्ते कुन्दकोरकाः ।

शीतभीता लताकुन्दमाश्रिता इव तारकाः ॥ २१ ॥

(मानुकरस्यैते)

शर्वरीषु किल शैशिरीषु तद्योपितां निधुवनेषु केलिषु ।

शीतशीर्यदधरेषु चुम्बनैः सीत्कृतं द्विगुणितं तदामवत् ॥ २२ ॥

याम्या दिशः संनिधिचारिणस्ते स्ववैरिणः शमनवाहनस्य ।

भिया हयाः किं तरणेः प्रतूर्णं जग्मुस्ततो दीनमिदं दिनं किम् ॥ २३ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ वसन्तसंधिः—

चूतानां चिरनिर्गतापि कलिका बध्नाति न स्वं रजः

संनद्धं यदपि स्थितं कुरबकं तत्कोरकावस्थया ।

कण्ठेषु स्वलितं गतेऽपि शिशिरे पुंस्कोकिलानां रुतं

शङ्के संहरति स्मरोऽपि चकितस्तूणार्धकृष्टं शरम् ॥ २४ ॥

(कालिदासस्य)

आपृच्छन्ते मलयजतरूनास्त्रजन्ते च वल्ली-

राभापन्ते चिरपरिचितान्मालिनीनिर्झरौघान् ।

अद्य स्थित्वा द्रविडमहिलामन्दिरे श्वः प्रभाते

प्रस्थातारो मलयमरुतः कुर्वते संविधानम् ॥ २५ ॥

अनुभूतचरेषु दीर्घिकाणामुपकण्ठेषु गतागतैकतानाः ।

मधुपाः कथयन्ति पद्मिनीनां सलिलैरन्तरितानि कोरकाणि ॥ २६ ॥

उपसि अमरयुवानः स्वप्ने दृष्ट्वा सरोजसाम्राज्यम् ।

गतकल्पकुन्दतल्पाः सरसीसलिलानि जिघ्रन्ति ॥ २७ ॥

(केपामप्येते)

व्यतीतकल्पे शिशिरैकवाल्ये संकल्पपुष्पोद्गमवन्धुराङ्गी ।

इयं लवङ्गी युवमृद्गसद्भादुच्छ्रान्गुच्छस्तनिकेव भाति ॥ २८ ॥

भृङ्गारवो मङ्गलगीतमासीत्पिकध्वनिर्दुन्दुभितामयासीत् ।

प्रस्यातुकामस्य जगज्जयाय सराज्ञया हन्त वसन्तकस्य ॥ २९ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ वसन्तः—

प्रयान्ति (प)पान्थास्त्वरया गृहाणि भवत्कृतान्तश्चरते वसन्तः ।

इतीव भृङ्गारवतो रसालैः संताड्यते किं पटहः पिकोऽयम् ॥ ३० ॥

(लक्ष्मणस्य)

स्यलकमलतरुणां कामिनीलोचनेषु

क्षिपति मुकुलमुष्ठा धूलिजातं विशालम् ।

तदनु हरति हन्त स्वान्तसर्वस्वमासा-

भयमनयविदग्धो धूर्तवन्मीनकेतुः ॥ ३१ ॥

(गणपतेः)

कामस्य जेतुकामस्य मिलनाय महीपतेः ।

देवो मीनं त्विषां मीने द्वारीकर्तुमिवाययौ ॥ ३२ ॥

उत्तष्टुमम्बुजदशामिव मानरत्न-

मादाय पट्टदतिलान्मधुवारिपूरान् ।

पुंस्कोकिलस्य कलकूजितकैतवेन

संकल्पवावयमयमातनुते रसालः ॥ ३३ ॥

रणत्कङ्कणानां क्षणनूपुराणां चलत्कुण्डलानां क्षणत्किङ्किणीनाम् ।

वधूनां मुखाम्भोरुहं द्रष्टुकामो रथं मन्थरं चक्रबन्धुश्चकार ॥ ३४ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथ ग्रीष्मः—

निदाघकाले किल चण्डरश्मिप्रचण्डरश्मिप्रकरावलीढम् ।

स्यादेव दग्धं जगदेव न स्याद्यदि सवस्त्रेदजलावलीनम् ॥ ३५ ॥

स्वदेहपर्मोदकपिच्छलेऽसिन्धुमःस्यले किं तरणेस्तुरङ्गाः ।

स्खलत्तुरा न त्वरया विचेतुस्ततो नु दीर्घा दिवसा निदाघे ॥ ३६ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

माध्वीकदुर्भिक्षमलिद्विजानां प्रदोषकालः पिकपण्डितानाम् ।
जरालवो मन्मथनायकस्य निदाघकालः समुपाजगाम ॥ ३७ ॥

(गदाधरस्य)

तप्ता मही विरहिणामिव चित्तवृत्ति-
स्तृष्णाध्वगेषु कृपणेष्विव वृद्धिमेति ।

सूर्यः करैर्दहति दुर्वचनैः खलो नु

छाया सतीव न विमुञ्चति पादमूलम् ॥ ३८ ॥

(कस्यापि)

अथ संसारसंहारवामनावन्धवासितः ।

अजायत वृषारूढो भैरवो महसां निधिः ॥ ३९ ॥

अत्युल्लसद्विसरहस्ययुजा भुजेन

वक्त्रेण शारदसुधांशुसहोदरेण ।

पीयूषपोषभुगेन च भाषितेन

त्वं चेत्प्रसीदसि मृगाक्षि कुतो निदाघः ॥ ४० ॥

मलयपवनचञ्चलनन्दनस्पन्दशीतं

जलनिधितनयायाः कण्ठमालिङ्ग्य दोर्भ्याम् ।

दिनकरकरजालज्वाला दूनदेहो

जलधिपयसि देवो वासुदेवो निदद्रौ ॥ ४१ ॥

(एते भानुकरस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां द्वादशो व्यापारः ।

त्रयोदशो व्यापारः ।

शृङ्गारस्य निरूपितकल्पत्वादल्पतया हास्यरसादयोऽपि निरूप्यन्ते—

अथ हास्यरसः—

प्रीतः प्रकाममहिफेनरसं निपीय

वृद्धो वृतः शिशुगणैः प्रलपन्वचांसि ।

आघूर्णयन्नघनमाकुलयन्मुखेन्दु-

मुद्गामयन्वपुरुपैति नृपस्य वेश्म ॥ १ ॥

(भानुकरस्य)

उपभुक्तलदिरवीटकजनिताधररागमङ्गभयात् ।

पितरि मृतेऽपि हि वेद्या रोदिति हा तात तातेति ॥ २ ॥

(क्षेमेन्द्रस्य)

सामगायनपूतं मे नोच्छिष्टमधरं कुरु ।

उत्कण्ठितासि चेद्भद्रे कर्णं सुम्बस्व दक्षिणम् ॥ ३ ॥

(कयोरपि)

रे रे लोकाः कुरुष्वं थवणपुटविधानं द्रुतं हस्तयुग्मैः

शैलाः सर्वेऽपि यूयं भवत गुरुतराः सावधाना धरिष्याम् ।

शीघ्रं रे रायण त्वं विरचय वसनैर्नोसिकानां पिधानं

सुप्तोऽयं कुम्भकर्णः कटुरवविकटं दधते दीर्घमुखैः ॥ ४ ॥

गताः केचित्प्रबोधाय स्वपन्तं कुम्भकर्णकम् ।

तदधः पवनोत्सर्गादुड्डीय पतिताः क्वचित् ॥ ५ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ करुणरसः—

कनकमृगमुदस्य स्वां कुटीं संप्रविष्टः

क्वचिदपि न बधूटीं नो(सं)ददर्शाङ्गनादौ ।

तदपि स रघुवीरः पर्णशालागृहान्त-

र्न विशति हृदयाशान्तन्तुनाशातिभीरुः ॥ ६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अनुवनमनुयान्तं नाप्पवारि त्यजन्तं

मृदितकमलदाम क्षाममालोक्य रामम् ।

दिनमपि रविरोचिस्तापमन्तः प्रपेदे

रजनिरपि च तारावाप्पविन्दून्वभार ॥ ७ ॥

(भानुकरस्य)

सीतामपास्य त्रपया नत्तास्य समागतं लक्ष्मणमनिरीक्ष्य ।

बभूव बाष्पाम्बुधिमध्यलीनो दृगन्तमीनो रघुनन्दनस्य ॥ ८ ॥

(कस्यापि)

असारं संसारं परिमुपितरत्नं त्रिभुवनं

निरालोकं लोकं मरणशरणं बान्धवजनम् ।

अदर्प कंदर्प जननयननिर्माणमफलं

अगज्जीर्णारण्यं कथमसि विधातुं व्यवसितः ॥ ९ ॥

(भयभूतेः)

शीलानि ते चन्दनशीतलानि श्रुतानि भूमीतलविश्रुतानि ।

तथापि जीर्णो पितरो वनेऽसिन्विहाय हा वत्स कथं प्रयासि ॥ १० ॥

(यदाधरस्य)

अविशीर्णकान्तपत्रे नव्यदशे सुमुखि संमृतखेहे ।

मद्देहदीपफलिके कथमुपयात्तासि निर्वाणम् ॥ ११ ॥

(लीलावतीकारस्य)

यस्याः कुसुमशय्यापि कोमलाङ्गत्रा ह्लाकरी ।

साधिशेते कथं दीना ज्वलन्तीमयुना [चिताम्] ॥ १२ ॥

(दण्डिनः)

स्तगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम् ।

विषमप्यमृतं कचिद्वेदमृतं वा विषमीक्षरेच्छया ॥ १३ ॥

(कालिदासस्य)

आदाय मांसमसिलं स्तनवर्जमङ्गा-

न्मां मुञ्च बाणुरिक यामि कुरु प्रसादम् ।

सीदन्ति शप्पकबलग्रहणानभिज्ञा

मन्मार्गवीक्षणपराः शिशवो मदीयाः ॥ १४ ॥

(कस्यापि)

अथ रौद्ररसः—

देहाज्ञां विज्ञ राज्ञां कुलमुकुटमणे राय लङ्काधिनाथं

मभीयां चास्त्रपाथोनिधिमथ मरुतां प्रापये किनु लङ्काम् ।

पुनः पुनर्मुवि क्षिप्तः पुनरेति स्वसंनिधिम् ।
 मन्दकन्दुकवज्जातो मृत्योः क्रीडनकं नरः ॥ २८ ॥
 जन्तुः संसारकान्तारे कालव्यालभयंकरे ।
 प्रविशन्नेव कोऽनेन नो नृसंसेन दंसितः ॥ २९ ॥
 नराः संसारकान्तारे विषयांश्चपलान्मृगान् ।
 व्याधा इव प्रधावन्तो यान्ति व्याघ्रान्तकान्तिकम् ॥ ३० ॥
 तरले जीवने जन्तुर्भोगान्भोक्तुं य ईहते ।
 स नूनं तडिदुष्यते मणीन्प्रभितुमीहते ॥ ३१ ॥
 यः स्वोद्धाराय गृह्णाति मूढो यान्यान्परिग्रहान् ।
 सार्धं मज्जति तैः पङ्के ममेभाद्विरिवेतरीः ॥ ३२ ॥
 मायया कर्षिता ज्येते न चोद्य(इय)न्ते मिथस्तथा ।
 पुनर्यथा न मुच्यन्ते तुर्येव पटतन्तवः ॥ ३३ ॥
 भङ्गदं भङ्गुरं भोगं गत्वरं सत्वरं धनम् ।
 भज मा भज मावासं तमीश्वरमनश्वरम् ॥ ३४ ॥
 उद्यद्विवेकतपनप्रफुल्ले हृदयान्बुजे ।
 विंशते भगवद्भक्तिरविन्द इवेन्दिरा ॥ ३५ ॥
 संसारतापदहनैः प्रतप्तायां मनोभुवि ।
 सम्यगरोहन्ति भगवद्भक्तिबीजाङ्कुरा इमे ॥ ३६ ॥
 उपरिस्था भक्तिरन्तर्निर्मूला तारयेत्कथम् ।
 नहि भारक्षमा दृष्टा वारां सान्द्रापि नीलिका ॥ ३७ ॥
 धर्मे सक्तिर्भवे भक्तिर्भवेऽरक्तिर्वरत्रयम् ।
 चतुर्थेपुरुषार्थाय चतुर्थं तीर्थवर्तनम् ॥ ३८ ॥
 तन्मनस्विन्मनः स्त्रीयं दिक्पर्यटनलम्पटम् ।
 दुर्मर्कटमिव क्षिप्रं स्थाणौ बद्धं स्थिरीकुरु ॥ ३९ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती .

रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति नित्यम् ।

आयुः परिस्रवति भिन्नघटादिबाम्भो .

लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् ॥ ४० ॥

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो

यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुपः ।

आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्

संदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ॥ ४१ ॥

उत्खातं निधिशङ्कया क्षितितलं धमाता गिरेर्घातवो

निस्तीर्णः सरितां पतिर्नृपतयो यत्नेन संतोषिताः ।

मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः

प्राप्तः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णेऽधुना मुञ्च माम् ॥ ४२ ॥

अग्रे गीतं सरसकवयः पार्श्वतो दाक्षिणात्याः

पृष्ठे लीलावलयरणितं चामरग्राहिणीनाम् ।

यद्यस्त्येवं कुरु भवरसास्वादने लम्पटत्वं

नो चेच्चेतः प्रविश सहसा निर्विकल्पे समाधौ ॥ ४३ ॥

अश्रीमहि वयं भिक्षामाशावासो वसीमहि ।

शयीमहि महीपृष्ठे कुर्वामहि किमीश्वरैः ॥ ४४ ॥

(भर्तृहरेरेते)

बन्धुव्रजैः सुमटकोटिभिरासवर्गै-

र्मग्रासतन्त्रविधिभिः परिरक्ष्यमाणः ।

जन्तुर्बलादधिबलोपकृतान्तदूतै-

रानीयतेऽयमवशाय वराक एषः ॥ ४५ ॥

दैवाद्वानेप्वधिगतेषु पटुर्न कायः

काये पटौ न पुनरायदवाप्ति वित्तम् ।

इत्थं परस्परहतात्मभिरात्मधर्मै-

र्लोकं मुदुःखयति जन्मकरः प्रबन्धः ॥ ४६ ॥

आस्तां भवान्तरविधौ सुविपर्ययोऽय-

मत्रैव जन्मनि नृणामधरोच्चभावः ।

अल्पः पृथुः पृथुरपि क्षणतोऽल्प एव

स्वामी भवत्यनुचरः स च तत्पदार्हः ॥ ४७ ॥

एकस्त्वभावदसि जन्मनि संक्षये च

भोक्तुं स्वयं स्वकृतकर्मफलानुयन्धम् ।

अन्यो न जातु सुखदुःखविधौ सदायः

स्वाजीवनाय मिलितं विटपेटकं ते ॥ ४८ ॥

घाहः परिग्रहविधिस्तव दूरमास्तां

देहोऽयमेति न समं सहसंभवोऽपि ।

किं तान्यसि त्वमनिशं क्षणदृष्टनष्टै-

र्दात्मात्मजद्रविणमन्दिरमोहपाशैः ॥ ४९ ॥

संशोच्य श्लोकविदसौ दिवसं तमेक-

मन्येद्युरापर.....स्वजनतवस्त्रे (?) ।

कायोऽपि भस्म भवति प्रचयार्चिषाग्नेः

संसारयन्त्रघटनाघटने त्वमेकः(?) ॥ ५० ॥

(एते सोमदेवस्य)

केनाप्यनर्थरुचिना कपटं प्रयुक्त-

मेतत्सुहृत्स्वजनबन्धुमयं विचित्रम् ।

कस्यात्र कः परिजनः स्वजनो जनो वा

स्वमेन्द्रजालसदृशः खलु जीवलोकः ॥ ५१ ॥

वीमत्सा विषया जुगुप्सिततमः कायो वयो गत्वरं

प्रायो बन्धुभिरध्वनीव पथिकैर्योगो वियोगावहः ।

हातव्योऽयमसार एष विरसः संसार इत्यादिकं

सर्वस्यैव हि वाचि चेतसि पुनः कस्यापि पुण्यात्मनः ॥ ५२ ॥

आत्मज्ञानविवेकनिर्मलधियः कुर्वन्त्यहो दुष्करं

यन्मुञ्चन्त्युपभोगमाङ्गपि धनान्येकान्ततो निःसृहाः ।

न प्राप्तानि पुरा न संप्रति न च प्राप्तो दृढः प्रत्ययो

वाञ्छामोऽत्र परिग्रहाण्यपि वयं त्यक्तुं न तानि क्षमाः ॥५३॥

अजानन्दाहार्तिं विशर्ति शलभो दीपदहनं

न मीनोऽपि ज्ञात्वा घृतम(ब)लिशमश्नाति पिशितम् ।

विजानन्तोऽप्येतान्वयमिह विपज्जालजटिलान्

न मुञ्चामः कामानहह गहनो मोहमहिमा ॥ ५४ ॥

क्षान्तं न क्षमया गृहोचितसुखं त्यक्तं न संतोषतः

सोढा दुःसहशीतवाततपनक्लेशा न तप्तं तपः ।

ध्यातं विचमहर्निशं नियमितप्राणैर्न शम्भोः पदं

तत्तत्कर्म कृतं यदेव मुनिभिस्तैस्तैः फलैर्वञ्चितम् ॥ ५५ ॥

जन्मेदं बध्यतां नीतं भवभोगोपलिप्सया ।

काचमूल्येन विक्रीतो हन्त चिन्तामणिर्मया ॥ ५६ ॥

कामं वनेषु हरिणास्तृणेन जीवन्त्ययन्नसुलभेन ।

धनिषु न दैन्यं विदधति ते खलु पशवो वयं सुधियः ॥ ५७ ॥

महता पुण्यपण्येन क्रीतेयं कायनौस्त्वया ।

पारं दुःखाम्बुधेर्गन्तुं तर यावन्न भिद्यते ॥ ५८ ॥

उपश.....विद्या धीजारफलं धनमिच्छतां

भवति निकलो यत्प्रारम्भस्तदत्र किमहुतम् ।

नियतविषया हेते भावा नयन्ति विपर्ययं

जनयति.....शाले बीजं न जातु यवाङ्कुरम् ॥ ५९ ॥

स्थूलप्रावरणोऽतिवृत्तकथनः कासाशुलालाविलो

ममोरःकटिपृष्ठजानुजघनो मुग्धोऽतिथीन्वारयन् ।

शृण्वन्धृष्टवधूवचांसि धनुषा संत्रासयन्वायसा-

नाशापाशनिबद्धजीवविमवो वृद्धो गृहे म्लायति ॥ ६० ॥

(एते विहणक्षतकात्)

मृत्योर्विभेदि किं मूढ भीतं मुञ्चति किं यमः ।

अजातं नैव गृह्णाति कुरु ययमजन्मनि ॥ ६१ ॥

अहौ वा हारे वा वलवति रिपौ वा मुहृदि वा
मणौ वा लोष्ठे वा कुसुमशयने वा दृषदि वा ।

तृणे वा सैने वा मम समदृशो यान्तु दिवसाः

कचित्पुण्यारण्ये शिव शिव शिवेति प्रलपतः ॥ ६२ ॥

(श्रीमर्तुहरेः)

सयेदो निबेदमृतिपण्डितै रतिजडस्य.....संभावनव्यसौ (?)

.....तदधुना मनाक् हसति हतान् पण्डितान् ॥ ६३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेद्यदि फलप्रदः ।

को विशेषस्तदा तस्य वन्यैरन्यैर्महीरुहैः ॥ •

.....माणो अमान्मद्विरहे स्थिता स्यात् ।

शाकुन्तिका कापि मिथोऽथ पोतान्विधाय नीडं निविडं कदा वा ॥ ६४ ॥

कुचौ तु परिचर्चितौ परिचितं चिरं चन्दनं

कृताः परमुरोजयोः परिसरेऽरविन्दस्रजः ।

स्तुतिर्नतिरपि स्मृतिर्वरतनोः कृतैवावरा-

दिदं तु निखिलं मया विरचितं पुनर्नेश्वरे ॥ ६५ ॥

चिरं ध्याता रामा क्षणमपि न रामप्रतिकृतिः

परं पीतं रामाधरमधु न रामाङ्घ्रिसलिलम् ।

नता रुष्टा रामा यदरवि न रामाय विनति- •

र्गतं मे जन्माग्र्यं न दशरथजन्मा परिगतः ॥ ६६ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

पुत्रमन्दिरकलत्रमेदुरं मे दुरन्तमिव भासितं जगत् ।

तन्निवेदय दयामनोहरं [संतरं] सरसि चेतसा कुतः ॥ ६७ ॥

(भानुकरस्य)

निधानमानन्दनिधेरिदानीं चिदां निदानं भज वा भवानीम् ।

कर्पूरगौरं भज शूलिनं वा नीलाम्बुदामं वनमालिनं वा ॥ ६८ ॥

(लक्ष्मणस्य)

इति श्रीआद्योलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां त्रयोदशो व्यापारः ।

चतुर्दशो व्यापारः ।

चिरं बुद्ध्या विरचितान्कविभिः.....

धन्यानन्यापदेशांस्ताना..... ॥ १ ॥

अथ कल्पद्रुमः—

विवेकविधुरं किलानुचितमेव कल्पद्रुम

द्रुमाधिप कृतं त्वया वितरणैकचेतस्तया ।

समं वदति पण्डितैरतिजडस्य संभावना-

मसौ तदधुना मनाहसति हन्त तान्पण्डितान् ॥ २ ॥

(लक्ष्मणः)

कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेद्यदि फलप्रदः ।

को विशेषस्तदा तस्य वन्यैरन्यैर्महीरुहैः ॥ ३ ॥

(कस्यापि)

अथ चम्पकः—

साधारणतरुबुद्ध्या न मया बद्धस्तवालवालोऽपि ।

लज्जयसि मामिदानीं चम्पक भुवनाधिवासिभिः कुसुमैः ॥ ४ ॥

अमन्वनान्ते नवमञ्जरीषु न पट्टदो गन्धफलीमजिघ्रत् ।

सा किं न रम्या स च किं न रन्ता बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा ॥ ५ ॥

क्रोपं चम्पक मुञ्च याचकजनैरायासितस्त्वं सखे

मा म्लासीः परितो विलोकय तरुः कस्तेऽधिरूढस्तुलाम् ।

कोपश्चेन्नियतस्तवास्ति हृदये धात्रे तदा कुप्यतां

येन त्वं हि सुवर्णवर्णकुसुमामोदोऽद्वितीयः कृतः ॥ ६ ॥

अथ केसरतरुः—

[संभावितो न] तरुणीकरपल्लवेन

सिक्तोसि नेन्दुवदनावदनासवेन ।

कुग्रामपागरनिकेतनसंनिधाने

केनेह केसरतरो बत रोपितोऽसि ॥ ७ ॥

अथागुरुः—

एणाद्याः पक्षवः किरातपरिपन्नैषा गुणग्राहिणी
 संचारोऽस्ति न नागरस्य विषयोच्छिन्नं मुनीनां मनः ।
 धूमेनातिसुगन्धिनात्र विपिने दिक्कमामोदय-
 न्नामूलं परिदहतेऽगुरुतरुः कसौ किमाचक्ष्महे ॥ ८ ॥
 आपत्सेव हि महतां शक्तिरमिव्यज्यते न संपत्सु ।
 अगुरोस्तथा न गन्धः प्रागस्ति यथामिपतितस्य ॥ ९ ॥
 (केपामप्येते)

अथाम्रः—

रे रे रसाल तरुसार वचो वि(ज्व)धेहि
 वासन्तिकीं स्वफलपल्लवपुष्पलक्ष्मीम् ।
 तावद्विकस्वरपिकद्विजसात्कुरु द्रा-
 ङ्ग व्यमितोऽसि कलभैः शलभैश्च यावत् ॥ १० ॥
 यद्यध्वनीन चिरमध्वनि धर्मस्त्रिजः
 कासारतीररुहमाश्रय नम्रमाश्रयम् ।
 छाया न केवलमितः श्रमिता लभन्ते
 कामं पचेलिमफलं विमलं जलं च ॥ ११ ॥
 (भोजमवन्धात्)
 न तादृक्कर्पूरे न च मलयजे नो मृगमदे
 फले वा पुष्पे वा तव मिलति यादृक्परिमलः ।
 परं त्वेको दोषस्त्वयि खलु रसाले यदधिकः
 पिके वा काके वा गुरुलघुविशेषं न मनुषे ॥ १२ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

अथ द्राक्षा—

दासेरकस्य दासीयं बदरी यदि रोचते ।
 एतावतैव किं द्राक्षा न साक्षादमृतास्पदम् ॥ १३ ॥

यद्यपि न भवति हानिः परकीयां चरति रासमो द्राक्षाम् ।
असमञ्जसमिति मत्स्या तथापि परिस्त्रिचते चेतः ॥ १४ ॥ (कयोरपि)

अथ पलाशः—

किंशुके शुक्र मा तिष्ठ भाविमृष्टफलाशया ।
बाक्षरङ्गप्रसङ्गेन के के नानेन वञ्चिताः ॥ १५ ॥ (कस्यापि)
उपनदपुलिने महापलाशः पवनसमुच्चलदेकपत्रपाणिः ।
दयदहनविनष्टजीवितानां सलिलमिवैष ददाति पादपानाम् ॥ १६ ॥
(भोजप्रबन्धात्)

अथ तालः—

त्वमध्यनीनाध्यनि तालशालच्छायामिमां हस्तमितां श्रितोऽसि ।
छायाफलेनाप्यतुलं फलं चे.....दलितं वृथा स्यात् ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ धृक्षः—

कश्चित्त्रयं पल्लवमादधाति कश्चित्प्रसूनानि फलानि कश्चित् ।
परं करालेऽस्य निदाघकाले मूले न दाता सलिलस्य कश्चित् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

मुक्तानि वैस्तव फलानि पचेलिमानि
क्रोडस्थितैरहह वीतभयैः प्रसुप्तम् ।
ते पक्षिणो जलरयेण विकृप्यमाणं
पश्यन्ति पादप भवन्तममी तटस्थाः ॥ १९ ॥
(महोदेवस्य)

किं जातोऽसि चतुष्पथे घनतरं छन्नोऽसि किं छायाया
छन्नश्चेत्फलितोऽसि किं फलभरैराढ्योऽसि किं संनतः ।
हे सदृक्ष सहस्र संप्रति सखे शाखाशिसाकर्षण-
क्षोभामोटनमञ्जनानि जनतः स्वैरेव दुश्चेष्टितैः ॥ २० ॥
(कस्यापि)

इयं बाला बल्ली मृदुकिसलयं तापविलयं
घनच्छायं शालं नवमतिविशालं परिगता ।

परं त्वस्याभ्यन्तर्गललवभस्मीकृतवनं

भुजङ्गं प्रोत्तुङ्गं कथमिव वराक्री कलयतु ॥ २१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ कपलिनी—

विधौ पुरःस्ये(षि)निधौ कलानामुद्यत्करेऽपि द्विजराजनाम्नि ।

किं पद्मिनी हारकयच्चकार वराटंकीनामपि गोपनानि ॥ २२ ॥

रे पद्मिनीपद्म भवच्चरित्रं चित्रं प्रतीमो वयमत्र किंचित् ।

त्वं पङ्कजन्मापि यदृच्छमावादपि स्पृशस्यम्बु न पङ्कसङ्गि ॥ २३ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

अथ कुमुद्वती—

अपि त्वया कैरविणि व्यधायि मुषा मुषाबन्धुनि बन्धुभावः ।

जनापवादः परितः प्रयातः समागमो हन्त न जातु जातः ॥ २४ ॥

(कस्यापि)

जनिः सरोऽद्वादतिपङ्क्तिनो यद्यलोलुपैर्वा मधुपैर्विहारः ।

कलङ्क एवैव कुमुद्वतीनां कलङ्किनः किंतु कलावतीनाम् ॥ २५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ भृङ्गः—

अन्यासु तावदुपमर्दसहासु भृङ्ग

लोलं विनोदय मनः सुमनोलतासु ।

मुग्धामजातरजसं कलिक्रामकाले

बालां कदर्थयसि किं नवमलिकायाः ॥ २६ ॥

(विकटनितम्बायाः)

मदनमवलोक्य निष्फलमनित्यतां बन्धुजीवकुसुमानाम् ।

वनमुपगम्य अमरः संप्रति जातो जपासक्तः ॥ २७ ॥

(कस्यापि)

कियद्वारं चारस्थितमधुकरैः पद्मसदने

त्वमद्धा रुद्धोऽसि द्रुतमिति निषिद्धोऽस्यपसर ।

हठादन्तर्गत्या पिवसि मकरन्दं च मधुलिङ्ग

मिपन्तस्तिष्ठामो वयमिह दुराशानियमिनः ॥ २८ ॥

आलिङ्गसे(!) चारुलतां लवङ्गीमाचुम्बसे(!) चाम्बुजिनीं क्रमेण ।

तां चूतवल्लीं मधुप प्रकामं संताडयसेव पदैः किमेतत् ॥ २९ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

स्वामोदवासितसमग्रदिगन्तराला

रक्ता मनोहरशिखा सुकुमारमूर्तिः ।

सेव्या सरोजकलिका तु यदैव जाता

नीतस्तदैव विधिना मधुपोऽन्यदेशम् ॥ ३० ॥

अपसर मधुकर दूरं परिमलबहुलेऽपि केतकीकुसुमे ।

इह नहि मधुलवलाभो भवति परं धूलिधूसरं वदनम् ॥ ३१ ॥

(कस्यापि)

सानन्दमेव मकरन्दमिहारविन्दे

विन्देत् पट्टदयुवेति जनैरटङ्कि ।

देवादकाण्डपरिसुद्रितपुण्डरीक-

कोपादभूदहह निःसरणं पुमर्थः ॥ ३२ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ पिकः—

किं कोमलैः कलरवैः पिक तिष्ठ तूष्णी-

मेते तु पामरनराः स्वरमाकलय्य ।

को वा रटत्ययमये निकटे कट्टनि

रे वध्यतामिति वदन्ति गृहीतदण्डाः ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

शृगालशशशार्दूलदूषितं दण्डकावनम् ।

पञ्चमं गायतानेन कोकिलेन प्रतिष्ठितम् ॥ ३४ ॥ (भानुकरस्य)

अथ चातकः—

ऊर्ध्वकृतग्रीवमहो मुधैव किं याचसे चातकपोत मेघम् ।

अत्यूजितं गर्जितमात्रमस्मिन्नम्गोधरे विन्दुलवस्तु दूरम् ॥ ३५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

एक एव खगो मानी चिरं जीवतु चातकः ।

म्रियते वा पिपासायां याचते वा पुरंदरम् ॥ ३६ ॥ (कस्यापि)

अथ शुकः—

सुभाषितस्याध्ययनेऽनुपकं शुकं वराकाः प्रहंसन्ति काकाः ।

तमेव संसत्सु गिरं फिरन्तं दृष्ट्वा भयन्ति त्रपया नतास्याः ॥ ३७ ॥

अमुष्मिन्नारामे तरुभिरभिरामे विटपिनः

स्फुटं नृत्यद्भृङ्गीविविधनवसंगीतफलनात् ।

परानन्दैः पूर्णाः क इव तव वर्णावलिपद-

क्रमश्रोता वेत्ता द्विजवर शुक श्राम्यसि कुतः ॥ ३८ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

इयं पल्ली भिक्षैरनुचितसमारम्भरसिकैः

समन्तादाक्रान्ता विषविषमवाणप्रणयिभिः ।

तरोरस्य स्कन्धे गमय समयं कीर निभृतं

न वाणी कल्याणी तदिह मुखमुद्रैव शरणम् ॥ ३९ ॥

(भर्तृहरेः)

द्राक्षां प्रदेहि मधु वा वदने निषेहि

देहे विधेहि किमु या करलालनानि ।

जातिस्वभावचपलः पुनरेष कीर-

स्तत्रैव यात्यति कुशोदरि मुक्तबन्धः ॥ ४० ॥ (कस्यापि)

अथ हंसः—

हा हन्त मानससरःसलिलावतंस

रे राजहंस पयसोः प्रविवेचनाय ।

चेच्छक्तिमान्बलु भवान्न तदा किमु स्यात्

किं वा कपोत उत वा कलविक्लपोतः ॥ ४१ ॥

(लक्षणागम)

हंसी वेत्ति परागपिञ्जरतनुः कुत्रापि पद्माकरे

प्रेयान्मे विसकन्दलीकिसलयं मुक्ते ह्ययं निर्धृतः ।

नो जानाति तपस्विनी यदनिशं जम्बालमालोडय-

ञ्जशैवालाङ्कुरमप्यसौ न लभते हंसो विशीर्णच्छदः ॥ ४२ ॥

(कस्यापि)

अथ समुद्रः—

निष्पीतपीनतिमिराणि मनोहराणि

रत्नानि सन्ति न कियन्ति तवान्तिकेषु ।

एतस्य कौस्तुभमणेर्रजतः परंतु

पाथोनिधे स्मरणमान्तरमावहेयाः ॥ ४३ ॥

त्वमद्य सिन्धो जगदेकबन्धो रत्नानि दातुं विमुखोऽसि कस्मात् ।

किं वा सुतः कल्पमहीरुहस्ते दानैः कृतार्थाकुरुते जगन्ति ॥ ४४ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पीत्वा गर्जन्यपस्ते दिशि दिशि जलदास्त्वं शरण्यो गिरीणां

सुत्रामत्रासभाजां त्रिदशविटपिनां जन्मभूमिस्त्वमेव ।

गाम्भीर्यं तच्च तादृक् तव सलिलनिधे किंतु विज्ञाप्यमेत-

त्सर्वोपायेन मैत्रावरुणिमुनिकृपादृष्टयः काहणीयाः ॥ ४५ ॥

(हरिहरस्य)

रत्नैरापूरितस्यापि मदलेशोऽस्ति नाम्बुधेः ।

मुक्ताः कतिपयाः प्राप्य मातङ्गा मदविहङ्गः ॥ ४६ ॥

स्वस्त्यस्तु विदुमवनाय नमो मणिभ्यः

कल्याणिनी भवतु मौक्तिकशुक्लिनः ।

प्राप्तं मया सकलमेव फलं पयोत्रे

यदारुणेर्जलचरैर्न विद्वद्विन्दते ।

अथ तडागः—

क्रौञ्चः शीडतु कूर्दतां च कुररः कङ्कः परिप्वज्यतां

मद्गुर्गघतु सारसश्च रसतु प्रोड्डीयतां टिट्ठिमः ।

भेकाः सन्तु बका वसन्तु चरतु स्वच्छन्दमांतिस्तटे

हंहो पद्मसरः कुतः कतिपयैर्हसैर्विना श्रीस्तव ॥ ४८ ॥

(कस्यापि)

अमरैर्गतं मधुकरैश्चलितं प्रकरं(रैः) प्रयातमपि पद्मदशाम् ।

विभवे गते सफलमेव गतं भुवमेकमश्नयति यशः सरसीम् ॥ ४९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ गिरिनिर्झरः—

कल्लोलसंचलदगाधजलैरलोलैः

कल्लोलिनीपरिवृढैः किमपेयतोयैः ।

जीयात्स जर्जरतनुर्गिरिनिर्झरोऽयं

यद्विप्रपापि तृपिता विवृषा भवन्ति ॥ ५० ॥

यद्वैभवाय निजवारिणि वारिसिन्धोः

क्षारं विमिश्रयसि निर्झर तद्वृथैव ।

धिगैवभवं तु तदमी तृपितास्तवैव

नीराय हन्त मधुराय करं किरन्ति ॥ ५१ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

अथ जलम्—

क्षौत्यं नाम गुणस्तवैव सहजः स्वाभाविकी स्वच्छता

किं म्रूमः शुचितां भवन्ति शुचयः स्पर्शेन यस्यापरे ।

किं वातः परमस्ति ते स्तुतिपदं यज्जीवनं देहिनां

त्वं चेन्नीचपथेन गच्छसि पयः कस्त्वां निरोद्धुं क्षमः ॥ ५२ ॥

(कस्यापि)

अथ कूपः—

यद्यपि बहुगुणगम्यं जीवनमेतस्य कूपमुख्यस्य ।

जयति तथापि विवेको दानं पात्रानुमानेन ॥ ५३ ॥

(भोजदेवस्य)

सगुणैः सेवितोपान्तो विनतैः प्राप्तदर्शनः ।

नीचोऽपि कूपः सत्पात्रैर्जीवनार्थं समाश्रितः ॥ ५४ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

अथ महीधरः—

किं तेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा

यत्राश्रिता हि तरवस्तरवस्त एव ।

मन्यामहे मलयमेव यदाश्रयेण

शाखोटनिम्बकुटजा अपि चन्दनानि ॥ ५५ ॥

रोहणाचल शैलेषु कस्तुलां कलयेत्तव ।

यस्य पापाणखण्डानि मण्डनानि महीभृताम् ॥ ५६ ॥

(कयोरपि)

अथ केसरी—

कुरङ्गीणां यूथं निभृतमिदमङ्गीकृतमयं

निरातङ्को यन्निर्दयहृदयभावोऽर्दयतु तत् ।

निवेद्यो वा कस्मिन्नयमविनयः केसरियुवा

हठान्मत्तेभानां युवतिषु विधत्ते नखपदम् ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अन्तर्बलान्यहममुष्य मृगाधिपस्य

वाचा निवेद्य कथमद्य लघूकरोमि ।

जानन्ति किंतु करजक्षतकुम्भिकुम्भ-

निर्मुक्तमौक्तिकमयानि वनान्तराणि ॥

स्तन्यं जातो न जग्राह कण्ठीरवकिशोरकः ।

चक्षुर्व्यापारयामास कुक्षे कुम्भरशालिनि ॥ ५९ ॥

(भानुकरस्य)

क्षुत्क्षामोऽपि जराकृशोऽपि शिथिलप्रायोऽपि कष्टां दशा-

मापन्नोऽपि विपन्नधीधृतिरपि प्राणेषु गच्छत्स्वपि ।

मत्तेभेन्द्रविभिन्नकुम्भपिशितमासैकवद्धस्पृहः ।

किं जीर्णं तृणमपि मानमहतामग्रेसरः केसरी ॥ ६० ॥

सिंहः शिशुरपि निपतति मदमलिनकपोलभित्तिषु गजेषु ।

प्रकृतिरियं सत्त्ववतां न खलु वयस्तेजसो हेतुः ॥ ६१ ॥

(भर्तृहरेः)

अथ गजः—

क्रीडाकारि तडागवारिणि गतातङ्गं न पङ्केरुहै-

र्वल्ली काचन शल्लक्रीतरुगता नाकर्षिता हर्षतः ।

नास्तिष्टा करिणी करेण करिणा कामातुरेणामुना

दंष्ट्राभिर्विकटाननः शिव शिव व्यालोकि पञ्चाननः ॥ ६२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

कैलिं कुरुष्व परिभुङ्क्ष्व सरोरुहाणि

गाहस्य शैलतटनिर्झरिणीपयांसि ।

भावानुरक्तकरिणीकरलालिताङ्ग

मातङ्गं मुञ्च मृगराजरणामिलापम् ॥ ६३ ॥

(आनन्दवर्धनस्य)

कौपे पयसि लघीयसि तापेन करः प्रसारितः करिणा ।

सोऽपि न पयसा लिप्तो लाघवमात्मा परं नीतः ॥ ६४ ॥

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै-

र्धूरीकृताः करिवरेण मदान्यवुज्या ।

तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा

भृङ्गाः पुनर्विकचपद्मवने चरन्ति ॥ ६५ ॥

(कयोरपि)

निषेवन्तामेते वृषमहिषमेपाश्वहरिणा

गृहाणि क्षुद्राणां कतिपयतृणैरेव सुखिनः ।

गजानामास्थानं मदसलिलजम्बालितमुवां

तदेकं विन्ध्याद्रेर्विपिनमथवा भूपसदनम् ॥ ६६ ॥

लुलाये गोमायौ मृगपरिपदि श्वापदकुले

करिष्यन्कार्पण्यं किमिह महिमानं गमयसि ।

निमग्नः पङ्केऽसिन्ननुभव करीन्द्राधिप दशा-

मभद्रं भद्रं वा विधिलिखितमुन्मूलयतु कः ॥ ६७ ॥

(कयोरपि)

तापो नापगतस्तृपा न च कृशा घौता न घूली तनो-

र्न स्वच्छन्दमकारि कन्दकवलः का नाम केलीकथा ।

दूरोत्क्षिप्तकरेण हन्त करिणा स्पृष्टा न वा पद्मिनी

मारब्धो मधुपैरकारणमहो शङ्कारकोलाहलः ॥ ६८ ॥

(लक्ष्मणसेनस्य)

एष एव मनस्तापः पङ्के मग्नस्य दन्तिनः ।

यत्तते यत्समुद्धर्तुं ज्ञातयो निभृतस्मिताः ॥ ६९ ॥

गजस्य पङ्कमग्नस्य त्रपाकरमिदं महत् ।

पारमुत्सृत्य यद्वच्छन्हरिणोऽपि हसत्यसौ ॥ ७० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ मृगः—

तृणं किं तर्णोपि प्रपिबसि किमर्णोऽपि मधुरं

रतक्रीडासक्तामभिरमयसे किं नु हरिणीम् ।

अये जानासि त्वं न खलु मृगयोः पाशपतितं

ततो मोक्षोपायं तव कमपि संचिन्तय सखे ॥ ७१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ मेघः—

ते ते चातकपोतका वितृषिता दावाग्निमग्नं वनं

संनिर्वापितमुष्णतापितमही निर्वापिता सर्वतः ।

कासाराः परिपूरिताः पृथुपयोधाराभिरम्भोधर

त्वय्येवायमहो महोर्जितमहादानावदानक्रमः ॥ ७२ ॥

नीरं दूरं तदपि विरसं जंगमा नो लताया-

स्तस्मिन्दातर्यपि जलनिधौ को लभेताम्बुविन्दुम् ।

दानाध्यक्षे त्वयि जलधर कापि कुत्रापि शैलाः

द्यालावन्तोऽमृतनिभजलैस्तर्पिताः सर्व एते ॥ ७३ ॥

अकूपाराद्धारि प्रचुरतरमादाय जलदः

स दानाध्यक्षोऽपि प्रकिरति जलं नाद्भुतमिदम् ।

स मेघो धन्यो यत्परिकिरति मुक्ताफलतया

यदीयासौ कीर्तिर्नटति नृपनारीकुचतटे ॥ ७४ ॥

नैवालवालवलयं भरितं हुमाणां

नार्द्राकृतापि घृत चातकपोतचक्षुः ।

दावानलाकुलतरुः शमितो न शीघ्रं

भाराय वारिधर वारिपदं तवामृत ॥ ७५ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

आश्रयः क्रियतामेव तरुः सन्मार्गमाश्रितः ।

पाथोद सिच्यतां काले नोपेक्ष्यो दूरभावतः ॥ ७६ ॥

(रत्ननाथस्य)

भैकैः कोटरशायिभिर्मृतमिव क्षमान्तर्गतं कच्छपैः

पाठीनैः पृथुपङ्कपीठलुठितैर्यसिन्मुहुर्मूर्च्छितम् ।

तस्मिन्शुष्कसरस्यकालजलदेनागत्य तच्चेष्टितं

यत्राकुम्भनिगमवन्त्यकरिणां यूथैः प्रयः पीयते ॥ ७७ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

शोषं गते सरसि शैवलमञ्जरीणा-

मन्तस्त्रिभिर्लुठति तापविशीर्णदेहः ।

अत्रान्तरे यदि न वारिद वारिपूरै-

राप्तावयेस्तदनु किं मृतमण्डनेन ॥ ७८ ॥

मावृषेण्यस्य मालिन्यं दोषः कोऽभौष्टवर्षिणः ।

शारदाश्रस्य शुभ्रत्वं वद कुत्रोपयुज्यते ॥ ७९ ॥

त्वमेव चातकाधार इति केषां न मोचरः ।

धिगम्भोधर तस्यापि कार्पण्योक्तिं प्रतीक्षसे ॥ ८० ॥

(केषामप्येते)

अथ वायुः—

वृथा धूलीधाराः परिकिरसि वात्याः प्रथयसे

नवावेगः कोऽयं पवन तव हा नन्वसमये ।

रतान्तश्चान्ताभिः स्तिमितनयनान्ताभिरनिशं

स्मृतो यत्कान्ताभिर्न मुलभतरः कापि च भवान् ॥ ८१ ॥

सतो ददाति नो नीरं नीरदानोन्मुखं घनम् ।

यत्तु वारयसे तन्न मातरिश्चन् तयोचितम् ॥ ८२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ चन्द्रान्यापदेशः—

कलास्तास्ताः सम्यग्वहसि यदसि त्वं द्विजपति-

द्युतिस्तादृग्नुवा जनिरपि च रत्नाकरकुले ।

बहु धूमः किंवा पुरहरशिरोमण्डनमसि

त्वदीयं तत्सर्वं शशधर कलङ्काद्विकलितम् ॥ ८३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

व्यज्यमानकलङ्कस्य वृद्धौ सति कलानिधेः ।

आशासहे वयं पूर्वा सर्वश्राम्यां कृशां दशाम् ॥ ८४ ॥

क्षीणः क्षीणः समीपत्वं पूर्णः पूर्णोऽतिदूरताम् ।

उपैति मित्राद्यच्चन्द्रो युक्तं तन्मलिनात्मनः ॥ ८५ ॥

(कयोरपि)

नीराणि नक्रवडवानलदूषितानि

तीराणि दुस्तरतरद्गदुरुत्तराणि ।

श्राव्यं किमस्य जलधेर्यदि नैष सनु-

राशाप्रसाधनकरो रजनीकरः स्यात् ॥ ८६ ॥

(भानुकरस्य)

अथ रवेरन्यापदेशः—

खद्योतो द्योतते तावद्यावन्नोदयते क्षशी ।

उदिते तु सहस्रांशौ न खद्योतो न चन्द्रमाः ॥ ८७ ॥

दक्षिणाशाप्रवृत्तस्य प्रसारितकरस्य च ।

तेजस्तेजस्विनोऽर्कस्य क्षीयतेऽन्यस्य का कथा ॥ ८८ ॥

करं प्रसार्य रविणा दक्षिणाशावलम्बिना ।

न केवलमनेनात्मा दिवसोऽपि लघूकृतः ॥ ८९ ॥

(केषामपि)

यत्पादाः शिरसा न केन विधृताः पृथ्वीभृतां मध्यत-

स्तस्मिन् भासति राहुणा कवलिते लोकत्रयीचक्षुषि ।

खद्योतैः स्फुरितं तमोभिरुदितं ताराभिरुज्जृम्भितं

धूकैरुत्थितमाः किमत्र करवै किं किं न कैश्चेष्टितम् ॥ ९० ॥

(परिमलस्य)

इति श्रीआद्योलकरलक्ष्मणभट्टकृती पद्यरचनायां चतुर्दशो व्यापारः ।

पञ्चदशो व्यापारः ।

अथ कौतुकात्किञ्चित्समस्याख्यानम्—

सर्वस्य जन्तोर्भवति प्रमोदो विरोधिवर्गे परिभूयमाने ।

तिरोहिते त्वद्यशसा नरेन्द्र चन्द्रोदये नृत्यति चक्रवाकी ॥ १ ॥

(देवेश्वरस्य)

तवानने भानिनि मञ्जुलस्य यदञ्जनस्यैष लवो निमग्नः ।

इतीदं श्लोकः प्रप्रेतेति सर्वं निपीलितं सुन्यति चन्द्रमिन्द्र ॥ २ ॥

(लक्ष्मणस्य)

चमूभरन्यच्चदुदच्चदुर्वीतले प्रयाणे तव भूमिपाल ।

अमृतपाणां विगलत्रपाणां कण्ठे कुठारः कमठे ठकारः ॥ ३ ॥

प्रविशति हरितामः पङ्कजातैर्निमग-

दुहिणचरणसेवां कर्तुमिद्रेश्लेषः (।।)

अगणितपरिमाणे भृङ्गभङ्गीं दधाने

अमति कमलकोपे मत्तमातङ्गसङ्घः ॥ ४ ॥

तर्तु पर्वतसंनिभेन कपिनालम् कृतां वक्षसि

क्षिपं वीक्ष्य निमज्जतीमथ नलस्पृष्टास्तरन्तीः शिलाः ।

लोको नृत्यपरं विभीषणजनं चेत्याह सेतुदमे

तुम्ही मज्जति संतरन्ति दृपदः प्रेतो दिवा नृत्यति ॥ ५ ॥

कर्णेन निर्जितोऽस्मीति चिन्तां चिन्तामणे त्यज ।

जिता देवद्रुमाः पद्म न दुःखं पद्ममिः सह ॥ ६ ॥

यदि प्राप्नोमि तां तन्वीं नो वर्पमपि कामये ।

को विहाय सुधाधारां दशमूलीपयः पिबेत् ॥ ७ ॥

क्षिग्यालिषुद्वसौहार्दं सरसामोदमन्दिरम् ।

इयं गणयती भाति पुष्पमालेव कामिनी ॥ ८ ॥

युद्धक्रुद्धभटच्छिन्नकुम्भिकुम्भस्वलोल्लसतैः ।

मुक्ताफलशतैः शङ्के दिवा तारकितं नभः ॥ ९ ॥

धन्योऽसौ पोत्रिणीपुत्रो यस्मासौ मलयापदि ।

सगोत्रस्य सितो दंष्ट्राकण्डकाग्रे महोदधिः ॥ १० ॥

सुमेरुशिखरप्रान्तस्थितदिव्यवधूपुसैः ।

परितः स्फुरितैः शङ्के शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ ११ ॥

दामोदरकरापातैर्विहलीकृतचेतसा ।

दृष्टं चाणूरमलेन शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ १२ ॥

विधे विधेहि शीतांगुं यावदायाति मे पतिः ।

आयाते दयिते कुर्याः शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ १३ ॥

चित्राय त्वयि चिन्तिते स्मृतिमुवा सज्जीकृतं सं धनु-
र्वर्ति धर्तुमुपागतेऽङ्गुलियुगे चाणा गुणे योजिताः ।

प्रारब्धे तव चित्रकर्मणि पुनस्तद्वाणभिन्ना सती

भित्तिं द्रागवलम्ब्य सिंहलपते सा तत्र चित्रायते ॥ १४ ॥

त्वत्कीर्तिमौक्तिकफलानि गुणैस्त्वदीयैः

संदर्भितुं विबुधवामदशः प्रवृत्ताः ।

नान्तो गुणेषु न च कीर्तिषु रन्ध्रलेशो

हारो न जात इति ताश्च मियो हसन्ति ॥ १५ ॥

(केषांचित्)

हीनहत्या दधात्येव लाभवं महतामपि ।

इति मत्वा द्विपद्वेपी मृगार्त्तिहः पलायते ॥ १६ ॥

(कस्यचित्)

मन्दानिलाहतविलोलशिखप्रदीप-

कक्षान्तरे विनिहितं समयं तरुण्याः ।

तस्याः समस्तकुचकुम्भयुगं निरीक्ष्य

बाहुं विनेवं विदधाति शिरःप्रकम्पम् ॥ १७ ॥

(भानुकरस्य)

मन्त्रात्तण्डलदन्तिदन्तमुसलान्यास्तण्डितान्याहवे

धारा यत्र पिनाकपाणिपरशोराकुण्ठतामागताः ।

तन्मे तावदुरो नृसिंहकरजैर्व्यादीर्यते सांप्रतं

दैवे दुर्बलतां गते तृणमपि प्रायेण चञ्जायते ॥ १८ ॥

(कस्यापि)

अत्रैव प्रश्नोत्तरेण यथा—

कस्तूरी जायते कलात् को हन्ति करिणां कुलम् ।

किं कुर्यात्कावरो युद्धे मृगार्त्तिहः पलायते (नम्) ॥ १९ ॥

अत्रैव पदभङ्गेन यथा—

मृगात् मृगमचीति मृगात् इति सिंहविशेषणम् । पलाय मांसाय ते
तवेति ।

अयं मृगः समायाति मृगात्सिंहः पलायते ।

सतो वेगात्पलायस्व त्वदि(मि)तस्त्वरितैः पदैः ॥ २० ॥

अथाद्य त्रिचरणसमस्यायाः पूरणमन्त्यचरणेन यथा—

त्रियामा शतयामा स्याच्छतचन्द्रं नमस्तलम् ।

शतेपुरेव पञ्चेपुर्भवेघ्नां वियोगिनाम् ॥ २१ ॥

मद्भोः शृङ्गं सप्ततालप्रमाणं कल्याणाद्रिः सर्पपत्न्यैकदेशः ।

विन्दुः सिन्धुः सिन्धुरभ्येकविन्दुर्लब्धो लुब्धैः साधुमीचोपकारे ॥ २२ ॥

अथ द्वितीयपादतुरीयपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

अहल्याफेलिकालेऽमृतकंदर्पाणां शतद्वयम् ।

तत्पञ्चवाणमिन्नाक्षः सहस्राक्षोऽन्यतां गतः ॥ २३ ॥

अथाद्य द्वितीयवैदिकपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

कामं कामदुषं धुङ्क्ष्व मिश्राय वरुणाय च ।

वयं धीरेण दानेन सर्वान् कामानशीमहि ॥ २४ ॥

अथाद्य तृतीयवैदिकपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

अणोरणीयान्महतो महीयान्योगे वियोगे दिवसोऽङ्गनायाः ।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं स्पृष्ट्वा सखे सत्यमिदं ब्रवीमि ॥ २५ ॥

अणोरणीयान्महतो महीयान्मध्यो नितम्बश्च मम प्रियायाः ।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं किंचाङ्गरामारुणितं प्रियायाः ॥ २६ ॥

(देवेश्वरस्यैते)

अथ वहिर्लापिकाः—

का मेघादुपयाति कृष्णदयिता का वा समा कीदृशी

कां रक्षत्यरिहा शरद्विकचयेत्कं धैर्यहस्त्री च का ।

कं घटे गणनायकः करतले का चञ्चला कथ्यता-

मारोहादवरोहतश्च निपुणैरेकं द्वयोरुत्तरम् ॥ २७ ॥

अत्र धारा, राधा, वन्द्या, द्यावम्, काशम्, शङ्खा, पाशम्, शम्पा ॥
इत्यारोहादवरोहणेन व्याख्यानम् ।

अथ चित्रकाव्यम्—

लोकानां मानपात्रं मनुजजनरतिस्त्वंसमूह्याद्विरक्षो
राज्ञामासत्त्वदक्षः कृतसमयरुचिर्मण्डितो धीरवर्गैः ।

फायत्वब्धीनकेतुः करमलितयवां(?)कौषमानैर्विहीनः

श्रीमद्वीराधिराज त्वमिव तव रिपुस्तत्र मं दं प्रतीमः ॥ २८ ॥

अत्र शत्रुपक्षे मकारस्थाने दकारः पठनीयः ।

वादानाशानुयुक्तो नगरकृतभतियौवनाक्रान्तदेहः

संग्रामप्राप्तपैर्यो न विदलितरुचा राजलक्ष्म्यातिहीनः ।

नित्यं दारासमस्थः प्रखरतनुनिमो यः सुमिक्षानुवर्ती

श्रीमद्वीराधिराज त्वमिव तव रिपुस्तत्र मुक्तादिवर्णः ॥ २९ ॥

अत्र पद्ये शत्रुपक्षे आद्याक्षरत्यागः ।

(एतौ लक्ष्मणस्य)

रत्यादिचित्रकाव्यं ग्रन्थगौरवभयादुपेक्ष्यते ।

अथ सज्जनः—

अपेक्षन्ते न च खेहं न पात्रं न दशान्तरम् ।

सदा लोकहिते रक्ता रत्नदीपा इवोत्तमाः ॥ ३० ॥

अथोदारः—

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।

उदारचरितानां तु यमुधैव कुटुम्बकम् ॥ ३१ ॥

अर्थिनां कृपणा दृष्टिस्त्वन्मुखे पतिता सकृत् ।

तदवस्था पुनर्देव नान्यस्य सुखमीक्षते ॥ ३२ ॥ (दण्डिनः)

अथ प्रशंसा—

स्वयं स्वगुणविस्तारादूर्णनामः पतत्यधः ।

तमेव संहरन्भूयः पदमुच्चैर्विगाहते ॥ ३२ ॥

गुणप्रशंसा—

गुणैरुत्तुङ्गतां याति नोचैरासनसंस्थितः ।

प्रासादशिखरारूढः काकः किं गरुडायते ॥ ३४ ॥

अथ संसर्गप्रशंसा—

किं वापरेण बहुना परिजल्पितेन

संसर्ग एव महतां महते फलाय ।

अम्भोनिधेस्तटरुहास्तरवोऽपि येन

बेलजलोच्छलितरत्नकृतालवालाः ॥ ३५ ॥

न स्यात्तथ्यं न गन्तव्यं क्षणमप्यधमैः सह ।

पयोऽपि शौण्डिकीहस्ते मदिरां मन्यते जनः ॥ ३६ ॥

वीणावंशाश्रया तुम्बी चुम्बत्युच्चैः कुचौ स्त्रियाः ।

पियत्यनार्यसंयोगाद्रक्तं नक्तंचरी यथा ॥ ३७ ॥

(केषामपि)

संतप्तायसि संस्थितस्य पयसो नामापि न श्रूयते

मुक्ताकारतया तदेव गलिनीपत्रस्थितं राजते ।

स्यात्यां सागरशुक्तिसंपुटगतं तज्जायते मौक्तिकं

प्रायेणाधममध्यमोत्तमगुणः संसर्गतो जायते ॥ ३८ ॥

(भर्तृहरेः)

वारिहारिघटीदोषात्ताड्यते तत्र झल्लरी ।

सच्छिद्रपुरुषस्याग्रे न स्थातव्यं कदाचन ॥ ३९ ॥

अथ धनस्तुतिः—

जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो भच्छता—

च्छीलं शैलतटात्पतत्वभिजनः संदह्यतां वह्निना ।

शौर्ये वैरिणि वज्रमाशु निपतत्वर्थोऽस्तु नः केवलं

येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे ॥ ४० ॥

यस्यास्ति विचं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।

स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥ ४१ ॥

(एतौ भर्तृद्वारेः)

धनमर्जय काकुत्स्थ धनमूलमिदं जगत् ।

अन्तरं नैव पश्यामि निर्धनस्य मृतस्य च ॥ ४२ ॥

(वासिष्ठात्)

भक्ते द्वेषो जडे प्रीतिररुचिर्गुरुलङ्घनम् ।

मुखे च फटुता नित्यं धनिनां ज्वरिणामिव ॥ ४३ ॥

आलिङ्गिताः परैर्यान्ति प्रस्वलन्ति समे पथि ।

अव्यक्तानि च भापन्ते धनिनो मद्यपा इव ॥ ४४ ॥

लक्ष्मीर्यादोनिधेर्यादो नादो वादोचितं वचः ।

विभ्यती धीवरेभ्यो या जडेष्वेव निमज्जति ॥ ४५ ॥

लक्ष्मि क्षमस्य वचनीयमिदं दुरुक्त-

मन्धीभवन्ति पुरुषास्तव सेवनेन ।

नो चेत्कथं कमलपत्रविशालनेत्रो

नारायणः स्वपिति पन्नगभोगतल्पे ॥ ४६ ॥

अथ कृपणः —

यदज्यते परिक्लेशैरर्जितं यन्न भुज्यते ।

विभज्यते तदन्तेऽन्यैः कस्यचिन्मास्तु तद्धनम् ॥ ४७ ॥

(केषामपि)

यत्करोत्यरतिक्लेशं तृष्णां मोहं प्रजागरम् ।

न तद्धनं कदर्याणां हृदये व्याधिरेव सः ॥ ४८ ॥

मृत्युः शरीरगोष्ठारं धनरक्षं वसुंधरा ।

दुश्चारिणी च हसति स्वपतिं पुत्रवत्सलम् ॥ ४९ ॥

सति द्राक्षाफले क्षीरे मृदामास्तादनं मुदे ।

अहो मातुरियं रीतिः कृपणे गर्भवर्तिनि ॥ ५० ॥

(भानुकरस्य)

स प्राप्तानपि भोगान्न भोक्तुमीष्टे मितंपचः ।

रसालकाले बलिमुद्भुसुरोगाकुलो यथा ॥ ५१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथार्थी—

जनस्याने भ्रान्तं कनकमृगतृष्णाकुलतया

वचो वैदेहीति प्रतिपदमुदश्रु प्रलपितम् ।

कृता लंकार्मुवदनपरिपाटीषु घटना

मयाप्तं रामत्वं कुशलवसुता न त्वधिगता ॥ ५२ ॥

(कस्यापि)

अथ दरिद्रः—

परीक्ष्य सत्कुलं विद्यां शीलं शौर्यं मुरूपताम् ।

विधिर्ददाति निपुणः कन्यामिव दरिद्रताम् ॥ ५३ ॥

हे दारिद्र्य नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं त्वत्प्रसादतः ।

पश्याम्यहं जगत्सर्वं न मां पश्यति कश्चन ॥ ५४ ॥

(कयोरपि)

कन्यास्वण्डमिदं प्रयच्छ यदि वा स्वाङ्गे गृहाणार्भकं

रिक्तं मूतलमत्र नाथ भवतः पृष्ठे पलाशोच्चयः ।

दम्पत्योर्निशि जल्पतो रिति वचः श्रुत्वैव चौरस्तदा

लठधं कर्षटमन्यतस्तदुपरि क्षित्वा रुदन्निर्गतः ॥ ५५ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

उत्थाय हृदि लीयन्ते निर्धनानां मनोरथाः ।

बालवैधव्यदग्धानां कुलस्त्रीणां कुचा इव ॥ ५६ ॥

(कस्यापि)

अथ खलः—

वक्तृत्वं ननु कुन्तलादिव मुखे तैक्ष्ण्यं कटाक्षादिव

कूर्तृत्वं कुचमण्डलादिव सुनैर्घृण्यं स्तनिचादिव ।

मालिन्यं नयनाञ्जनादिव किलाधैर्यं स्वभावादिव

स्त्रैरन्यैश्च सुशिक्षितोऽसि खल किं जातोऽस्यतोऽरुंतुदः ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

हस्त इव मूर्तिमलिनो लङ्घयति यथा यथा खलः सुजनम् ।

दर्पणमिव तं कुरुते तथा तथा निर्मलच्छायम् ॥ ५८ ॥

(सुबन्धोः)

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया ।

उपातन्मुखभङ्गो वा दूरतो या विसर्जनम् ॥ ५९ ॥

नौश्च दुर्जनजिह्वा च प्रतिकूलप्रसारिणी ।

परमत्तारणायैव दारुणा केन निर्मिता ॥ ६० ॥

(कस्यापि)

अथ कुपुत्रः—

पित्रोर्नैव वचः शृणोति दिवसत्यागे व्रजत्यालयं

यान्तीभिर्युवतीभिरध्वनि मुहुः कौतूहलं विन्दति ।

बन्धूनामुपदेशवाचि वदति क्रोधैकतानं वचः

साधून्विन्दति दुर्जनं च मनुते मित्रं कुपुत्रो जनः ॥ ६१ ॥

अथ कापुरुषः—

नारीणां वचनेन कर्म कुरुते दीनं वचो भाषते

नालस्यं विजहाति तिग्मकिरणे प्रौढे समुत्तिष्ठति ।

किंचिरकापि न साहसे वितनुते गेहे चिरं दूयते

नो वा विन्दति पौरुषं कुपुरुषः कोऽप्येष निर्णायताम् ॥ ६२ ॥

कापुरुषः कुकुरश्च भोजनैकपरायणः ।

लालितः पार्श्वमायाति वारितो नैव गच्छति ॥ ६३ ॥

प्रागल्भ्यं प्रथयन्प्रशो विद्मदयन्धाटीं मुखे योजय-

न्मूपानां कलयन्कथां विरचयन्हस्ताङ्गुलीः स्फोटयन् ।

दानं पल्लवयन्गुणं द्विगुणयन्नेत्राञ्चलं घूर्णय-

लम्पाकः सविधं समेत्य सुदृशां किं नाम नो भाषते ॥ ६४ ॥

अथ कर्कशः—

समेत्य वहिरङ्गणात्कलहवाक्यमाविग्रती

रजः किरति हुंकरोत्यवनमङ्गिणास्कन्दति ।

रदैः कटकटध्वनिं वहति मोटयत्यङ्गुली-

र्वपुर्दशति फूत्कृतिं कलयति कुधा घावति ॥ ६५ ॥

(भानुकरस्यैते)

व्यासादीन्कविपुङ्गवाननुचितैर्वाक्यैः सलीलं हस-

न्नुच्चैर्जल्प निमील्य लोचनयुगं श्लोकान्सगर्वं पठ ।

काव्यं धिक्कुरु यत्परैर्विरचितं स्पर्धस्य सार्धं बुधै-

र्यद्यभ्यर्थयसे श्रुतेन रहितः पाण्डित्यमाप्तुं बलात् ॥ ६६ ॥

(कस्यापि)

अथ पण्डितः—

अधिगतपरमार्थान्पण्डितान्मावमंस्था-

स्तृणमिव लघु लक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि ।

मदमिलितमिलिन्दइयागगण्डस्थलानां

न भवति विस्रतन्तुर्वारणं वारणानाम् ॥ ६७ ॥

इह तुरगशतैः प्रयान्तु मूढा धनरहितास्तु बुधाः प्रयान्तु पञ्चाम् ।

गिरिशिखरगतापि काकपङ्क्तिः पुलिनगतैर्न समत्वमेति हंसैः ॥ ६८ ॥

(भर्तृहरेरेतौ)

अथ मुनिः—

वलमीकाग्रनिमग्नमूर्तिरुरगत्वङ्म्रसूत्रान्तरः

कण्ठे जीर्णलतावितानवलयेनात्यर्थसंपीडितः ।

अंशव्यापिशकुन्तनीडनिचयं विग्रज्जटामण्डलं

यत्र स्थाणुरिवाचलो मुनिरसावभ्यर्कबिम्बं स्थितः ॥ ६९ ॥

(कालिदासस्य)

अथ तपोवनम्—

तपोवने केसरिणीकरिण्योरिहाद्भुतं शवकयोर्व्यलोकि ।

व्यातेनतुर्यत्स्तनपानकाले मात्रोर्विपर्यासविलासमेतौ ॥ ७० ॥

(लक्ष्मणस्य)

विलोक्य कमलाकान्तमवलास्तनलालसम् ।

जहसुः कुसुमव्याजादिव यत्र महीरुहः ॥ ७१ ॥

मृगसहितं मृगलाञ्छनमाक्रामन्तं विधुंतुदं वीक्ष्य ।

यत्र भयेन भजन्ते मृगशिशवो मृगदृशामङ्गे ॥ ७२ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

श्यामाकतन्दुलविलेपकदर्थिताभि-

रेताभिः शरणेषु सधर्मिणीभिः ।

तन्नासहेतुमपि दण्डमुदस्यमान-

माप्राप्तुमिच्छति मृगे मुनयो हसन्ति ॥ ७३ ॥

(मुरारेः)

अथ महावनम् ।

इह महिषविषाणव्यस्तपापाणपीठ-

स्खलनसुलभरोहद्गर्भिणीभ्रूणहत्याः ।

कुहरविरहमाणमौढभलूकहिका-

चयचकितकिरातन्यस्तशस्त्रा वनान्ताः ॥ ७४ ॥

(मुरारेः)

अथ मृगया—

अरण्यहरिणग्राममाचकाम हुताशनः ।

इन्दोः क्रोडमृगं धर्तुमिव धूमो नमो अयौ ॥ ७५ ॥

उपगूहति दवदहने त्रिमुवनधन्यामरण्यानीम् ।

मूर्ता इवान्धकारा प्रतिदिशमपयान्ति कासरावलयः ॥ ७६ ॥

(गणपतेः)

अथ व्यास्यन् व्याघ्रान्.....

.....

.....परिमृगयमाणो मृगकुलं

मृगेन्द्रान्मिन्दानो नृपतिरपि तेने स मृगयाम् ॥ ७७ ॥

निहत निहत तूणे घत्त घत्त त्वराभि-

मिलत्त मिलत्त के के कुत्र कुत्र प्रयान्ति ।

इत्त इत्त इत्त एते यान्ति यान्तीत्यरण्या-

दतुलकलकलश्रीः सर्वतः प्रादुरासीत् ॥ ७८ ॥

उद्यन्महीपालमरीचिमालीशिलीमुखश्रेणिकरावलीभिः ।

उदारभृदारघनान्धकारसंभारमुच्छिन्नतरं चकार ॥ ७९ ॥

(गदाधरस्य)

चन्द्रोऽनेन फलङ्कितो बत्त वने रामोऽमुना वधितः

किं चानेन कुलाङ्गनानयनयोर्लावण्यलक्ष्मीर्हिता ।

सस्यानामभिलाषुकस्य भवतः श्रीरुद्रचन्द्रप्रभो

तन्मन्ये हरिणस्य हन्त हननायाखेटकोपक्रमः ॥ ७९ ॥

(रामचन्द्रस्य)

शङ्कुव्याफीर्णरङ्कुद्रुतनिक्षितशरक्षुण्णादीव्यत्तरक्षु-

व्याघोषक्षुब्धकण्ठीरवरवचकितव्यस्तमातङ्गयूयम् ।

स्वङ्गव्यालूनकण्ठं तुमुलकलकलप्रान्तकूजच्छकुन्तं

मल्लध्वस्ताच्छभलं वनभुवि मृगयाकर्म तेन प्रतेने ॥ ८० ॥

(कविराजस्य)

अथ काव्यप्रशंसा—

किं कवेसास्य काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः ।

परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः ॥ ८१ ॥

उत्फुल्लमलैरालापाः क्रियन्ते दुर्मुखैः सुखम् ।

ज्ञानाति हि पुनः सम्यक्विरेव कवेः श्रमम् ॥ ८२ ॥

(त्रिविक्रमस्य)

कवयः परितुप्यन्ति नेतरे कविसूक्तिभिः ।

न ह्यकूपारवत्कूपा वर्धन्ते विघ्नकान्तिभिः ॥ ८३ ॥

(कस्यापि)

अर्थान्केचिदुपासते कृपणवत्केचित्स्वलंकुर्वते

वेद्यावत्स्वलु धातुवादिन इषोद्वध्नन्ति केचिद्रसान् ।

अर्थालंकृतिसद्रसद्रयमुचां वाचां प्रशस्तिस्पृशां

कर्तारः कवयो भवन्ति कतिचित्पुण्यैरगण्यैरिह ॥ ८४ ॥

(राघवचैतन्यानाम्)

जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथावगच्छामि ।

प्रागल्भ्यमधिकमाहुं वाणी वाणो बभूवेति ॥ ८५ ॥

(गोवर्धनस्य)

तावत्कविविहङ्गानां ध्वतिलोकेषु शस्यते ।

यायन्नो विशति श्रोत्रे मयूरमधुरध्वनिः ॥ ८६ ॥

हृदि लगेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः ।

भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम् ॥ ८७ ॥

(त्रिविक्रमस्य) (त्रिलोचनस्य)

ते भूमीपतयो जयन्ति नतयो येषां द्विपद्भृतां

ते यन्त्या यतयो विशन्ति मत्तयो येषां परब्रह्मणि ।

ते श्लाघ्याः कवयो वयोमदभरव्याजृम्भमाणाङ्गना-

द्वक्पता इव तोषयन्ति हृदयं येषां गिरां भङ्गयः ॥ ८८ ॥

गणेश्वरकवेर्वचोविरचनैकवाचस्पतेः

प्रसन्नगिरिनन्दिनीचरणपङ्कवं ध्यायतः ।

तथा जगति भारती भगवती यथा सा सुधा

सुधा भवति सुभ्रुवामधरमाधुरी म्लायति ॥ ८९ ॥

(गणेश्वरस्य)

यशोधननिधेर्यदा नरहरेर्वचो वर्ण्यते

तदा गतमदा मदालसमरालबालारवाः ।

न विभ्रमचरीकरी भवति चाधरी माधुरी

सुधाकरमुधाक्षरी मधुकथा वृथा जायते ॥ ९० ॥

उमानिमां समुद्रीक्ष्य शीतदीधितिशेखराम् ।

एषा तु भारती भानुं मत्तं स्वीकृत्य नृत्यति ॥ ९१ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

प्रवर्तसेति को नाम प्रवर्तेत विना रसात् ।

केन प्रवर्तिता भृङ्गाः प्रवर्तन्ते सरोरुहि ॥ ९२ ॥

सुभाषितरसावलीमधुनि लम्पटोऽयं चिरा-

ददन्निखिलनाटिकाटविषु केन विश्राम्यतु ।

कविब्रजमधुव्रतः समधुवाटिकानिर्मितं

क्षणं नयनगोचरीचरिकरीति यावन्न मे ॥ ९३ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

इति श्रीभाट्टोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां पद्यरचो व्यापारः ।

समाप्तेयं पद्यरचना ।

पद्यरचनाश्लोकानां वर्णक्रमेणानुक्रमणिका ।



| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|---------------------------|-----------|--------------------------|-----------|
| अंसेन कर्णे चिबुकेन वक्षः | ६३ । २४ | अनेन सर्वार्थिकृतार्थता | १५ । ३५ |
| अकरोः किमु नेत्र | ५३ । ५ | अन्तर्बलान्यहममुष्य | १०१ । ५८ |
| अकूपाराद्वारि | १०४ । ७४ | अन्यार्थमज्ञीकृत | १४ । ३१ |
| अग्रे गीतं सरसकवचः | ८९ । ४३ | अन्यासु तावदुपमर्दं | ९६ । २६ |
| अचलं बलदिष चक्षुः | ३१ । १२ | अन्योन्यास्फालभिन्न | २४ । ४७ |
| अचिन्तनीया विविदश्चेत्यं | ७५ । १८ | अपण्यं भूम्नम— | २७ । ६७ |
| अज्ञानन्दाहार्तिं विशति | ९१ । ५५ | अपसर मधुकर दूरं | ९७ । ३१ |
| अणोरणीयान्महतो | १०९ । २५ | अपि लया कैरविणि | ९६ । २४ |
| अणोरणीयान्महतो | १०९ । २६ | अपि दिनमणिरेष ह्लेशित | ८० । १४ |
| अत्युल्लसद्विसरहस्य | ८३ । ४० | अपेक्षन्ते न च केहं | ११० । ३० |
| अत्रासितं शयितमत्र | ४४ । ७ | अयलाकृतिं समुपकल्प्य | ६४ । ३० |
| अथ व्यस्यन्व्याघ्रान् | ११६ । १७ | अभूत्राची पिङ्गा | ६१ । ११ |
| अथ शृङ्गारशृङ्गार | २९ । १ | अभ्युत्सन्ति विनिवारित | ७९ । ११ |
| अथ संक्षेपतो वक्ष्ये | ४६ । १ | अमरगतं मधुकरै | १०० । ४९ |
| अथ संतारसंहार | ८३ । ३९ | अमुक्तां भूपयन्तु स्वां | ८ । ४४ |
| अथानवद्यपयेषु | ९ । १ | अमुष्मिन्नारामे तदभि | ९८ । ३८ |
| अथोत्तरस्यां दिशि राज्ञ | ७८ । ४ | अमूल्यस्य मम स्वर्ण | ३८ । ६४ |
| अदम्भा हि रम्भा विलक्षा | २९ । ५ | अम्बरमेव रमन्त्ये | ७९ । १२ |
| अद्यापि तन्मनसि | ४५ । १८ | अम्बरविपिनमिदानीं | ६९ । ६ |
| अयारभ्य कठोरकार्मुक | २१ । २८ | अम्भोदहाक्षि शम्भो | ४८ । १६ |
| अधाक्षिप्रो लङ्कां | २८ । ७१ | अयं कामो निजामो वा | १७ । ६ |
| अधिगतपरमार्थान् | ११५ । ६७ | अयं निजः परो चेति | ११० । ३१ |
| अधिदेहलि हन्त | ४१ । १२ | अयं पुरः पार्येणशर्परीशः | ७० । १३ |
| अधिपद्यवटीकूटीरवार्ता | ३ । १७ | अयं मृगः समायाति | १०९ । २० |
| अध्यायोधनवेदि | १३ । २१ | अयं रेवाकृष्णः कुसुम | ५० । २६ |
| अनवाप्तययति रहसि | ७४ । १४ | अयमुदयमहीश्वन् | ६१ । १२ |
| अनुनयमश्रुदीप्ता व्याज | ६२ । १६ | अये नृपनिमग्दली | १२ । १९ |
| अनुभूतचरेषु दीर्घिकाणां | ८१ । २६ | अये मातर्दृष्टा मुख | ३१ । २० |
| अनुवनमनुयान्तं | ८४ । ७ | अये मातस्पातः | २७ । ६६ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|------------------------------|-----------|
| अरण्यहरिणग्राम | ११६।७५ |
| अरुणदलनलिन्याः त्रिगुण | ७२।२ |
| अर्थान्केचिदुपासते | ११८।८४ |
| अर्थिनां कृपणा दृष्टिः | ११०।३२ |
| अलक्षितकुचभोगं | ६५।३८ |
| अलक्षितगतागतैः | १९।२२ |
| अलसभुजलताभिः | २८।६८ |
| अलसं वपुषि स्थं | १७।८ |
| अविरतमिदमम्भः स्नेच्छया | ६३।२८ |
| अविशीर्णकान्तपात्रे | ८५।११ |
| अश्वीमहि वयं शिक्षा | ८९।४४ |
| असंख्यपुष्पोऽपि मनोभव | ६४।३१ |
| असारं ससारं | ८५।९ |
| अस्तादिलम्बिरविबिम्ब | ६६।४७ |
| अस्यामपूर्वं इव कोऽपि | ३२।२४ |
| अस्यैव रम्भोऽहं तवानन— | ३२।२३ |
| अस्याध्यायः पिबानां | ६३।२१ |
| अहल्याकेलिकाले | १०९।२३ |
| अहो बाणस्य संधानं | ७८।३ |
| अहो वा हारे वा बलवति | ९९।६२ |
| आकाशदेनात्परिपातु | ८७।८५ |
| आकाशे नटनं सरोरुह | ५७।२५ |
| आह्वयते हतितं पितामह | ७।३९ |
| आनुम्य बिम्बाधरमह— | ८०।२० |
| आप्तमाप्तमधिकान्त | ६३।२७ |
| आत्मज्ञानविवेक | ९०।५४ |
| आत्मीयं चरणं दधाति | ७२।३ |
| आदाय मांसमखिल | ८५।१४ |
| आपणखेद इमं महता | ९४।९ |
| आपृच्छन्ते मलयजतरु | ८१।८५ |
| आभाति शोभातिशय | ३१।१८ |
| आभात्येतद्विचन्द्रं | ९।२ |
| आभुम्राहुलिपलवौ | ३१।१९ |
| आलिङ्गसे चारुलतां | ९७।२९ |
| आलिङ्गिताः परैर्यन्ति | ११२।४४ |
| आध्रयः क्रियतामेव | १०४।७६ |
| आस्तां भवान्तरविधौ | ९०।४७ |
| आहादयत्वेव खरैः | २।११ |
| उक्तं यत्कृपणं वचो | ५९।४३ |
| उच्चैस्तरादम्बरशैलमीले | ६७।४८ |
| उत्खात निधिचट्टया | ८९।४२ |
| उत्थाय हृदि लीयन्ते | ११२।५९ |
| उत्फुल्लयल्लरालापा | ११७।८२ |
| उत्सार्य कुन्तलमुपास्य | ६०।३ |
| उत्सृज्यमम्बुजदशा | ८२।३३ |
| उदयद्वक्षोऽह्वय | ३१।१७ |
| उदयति तदुष्णिभतरणौ | ३१।१३ |
| उद्भूयेत तनूलता | ४०।६ |
| उद्भिदुरं स्तनवदनं | ७४।१७ |
| उद्यद्दक्षिणि दुर्दुरारवपुषि | ४८।१३ |
| उद्यद्विवेकतपन | ८८।३५ |
| उद्यन्महीपालमरीचि | ११७।८९ |
| उपगृह्णति दग्धहने | ११६।७६ |
| उपनदपुलिने | ९५।१६ |
| उपमुक्तसदिरवीटक | ८४।२ |
| उपरिस्था भक्तिरन्त | ८८।३७ |
| उपश्र.....विद्या | ९१।५९ |
| उमाभीनां समुद्रीस्य | ११९।९१ |
| उरोरुहाम्भोरुहदर्श | ५६।२२ |
| उपस्थि भ्रमरवुवानः | ८१।२७ |
| ऊरीर्ध्वं कुहिनकिरण | ९।४७ |
| ऊर्ध्वाकृतग्रीव | ९८।३५ |
| इतलसद्विहृतम्— | २७।६२ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|------------------------------|-----------------------------------|
| इदं नभसि भीषणप्रमद | कल्पद्रुमोऽपि कालेन ९३। ३ |
| इयं चिद्रूपि शकट | कलोलसंचलदगाप १००। ५० |
| इयं धत्ते धीरे मलयज | कवयः परितुष्यन्ति ११८। ८३ |
| इय पद्मो भिक्षुः | कवित्प्रोहम्फप्रवण १। २ |
| इयं बाला पद्मी | कथिप्रवपद्मव ९५। १८ |
| इय संप्रातर्त्त किमकृत | कस्तूरी जायते कसात् १०८। १९ |
| इह दुरंगशतैः प्रयान्तु मूढाः | काशी काशी न धत्ते १८। १३ |
| इह महिषविपाण | काशीदाम निवेशयन् ४९। १७ |
| एक एव रागो मानी | कान्ते कलितचोलान्ते ५६। २३ |
| एकत्र कौलमतमज्ञ | कान्ते नितान्तं दयिता ५६। २१ |
| एकस्त्वमावहसि | कापूरुषः पुकुरध ११४। ६३ |
| एकानपाङ्गिरपरास्तरङ्ग | कामं कामदुषं मुहुर्व १०९। २४ |
| एकान्तमुन्दरविधानजङ्गः | कामं वनेषु हरिणास्तुणेन ९१। ५७ |
| एणाद्याः परिपन्नपा | कामसंगरविधां मुगीदृष्टः ५९। ४१ |
| एतदुराः स्फुरति | कामस्य जेतुकामस्य ८२। ३२ |
| एते वारिकर्णान्किरन्ति | कामिनो हन्त हेमन्त ८०। १६ |
| एतस्य रहसि यक्षसि | का भेषादुपयाति कृष्ण १०९। २७ |
| एनं विद्याय तुलसी— | कामेन कामं प्रहिता जवेन ७५। २३ |
| एष एव मनस्त्रापः | किं कवेस्तस्य कान्येन ११७। ८१ |
| धौकारो यस्य कन्दः | किं कोमलैः कलरवैः ९७। ३३ |
| कण्ठस्य विदधे घ्नन्ति | किं कामुदी शशिकला २९। ३ |
| कनकमृगमुदस्य | किं चित्कोपकलाकलाप ८७। २१ |
| कन्याखण्डमिदं प्रयच्छ | किं जातोऽसि चतुष्पदे ९५। २० |
| कमलाकुचकनकाचल | किं तेन हेमगिरिणा १०१। ५५ |
| करं प्रसायं रविणा | किं त्वं निगूहसे द्रुति ५४। १० |
| करवारिदहेण संधुनाने | किंवा परेण बहुना १११। ३५ |
| कर्मेन निर्मितोऽस्मीति | किंशुके शुक्र मा तिष्ठ ९५। १५ |
| कर्णौ तावत्कुचलयद्वदां | किमकारि मन्दमतिना ४३। ३ |
| कलमाः पाकयिनम्रा | कियद्द्वारे वारस्थित ९७। २८ |
| कलाधिनायानयनाय सायं | कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलया १४। २९ |
| कलास्तास्ताः सम्यक् | कुचौ तु परिचर्चितौ ९२। ६५ |
| कल्पद्रुमोऽपि कालेन | |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|---------------------------|-----------|
| अरण्यहरिणमाम | ११६ । ७५ |
| अरुणदलनलिन्याः क्षिप्र | ७२ । २ |
| अर्थान्केचिदुपासते | ११८ । ८४ |
| अर्थिनां कृपणा दृष्टिः | ११० । ३२ |
| अलक्षितकुन्ताभोग | ६५ । ३८ |
| अलक्षितगतागतैः | १९ । २२ |
| अलसभुजलताभिः | २८ । ६८ |
| अलसं वपुषि स्थं | १७ । ८ |
| अविरतमिदमम्भः खेच्छया | ६३ । २८ |
| अविशीर्णकाम्तपात्रे | ८५ । ११ |
| अश्रोमहि वयं शिक्षा | ८९ । ४४ |
| असंख्यपुष्पोऽपि मनोभव | ६४ । ३१ |
| असारं संसारं | ८५ । ९ |
| अस्तादिलम्बिरविबिम्ब | ६६ । ४७ |
| अस्यामपूर्वं इव कोऽपि | १२ । २४ |
| अस्यैव रम्भोऽहं तवानन— | ३२ । २३ |
| अस्त्राध्यायः पिकानां | ६३ । २१ |
| अहल्याकैलिकाले | १०९ । २३ |
| अहो बाणस्य संधानं | ७८ । ३ |
| अही वा हारे वा बलवति | ९२ । ६२ |
| आकाशदेशात्परिपातु | ८७ । ८५ |
| आकाशे नटनं सरोवह | ५७ । २५ |
| आख्याते हवितं पितामह | ७ । ३९ |
| आचुम्भ्य विम्बाघरमज्ञ— | ८० । २० |
| आत्तमात्तमधिकान्त | ६३ । २७ |
| आत्मज्ञानपिवेक | ९० । ५४ |
| आत्मीयं चरणं दधाति | ७२ । ३ |
| आदाय मांसमखिल | ८५ । १४ |
| आपत्स्वेद हि महतां | ९४ । ९ |
| आपृच्छन्ते मलयजतरु | ८९ । ८५ |
| आभाति शोभातिशय | ३१ । १८ |
| आभात्येतद्विचन्द्रं | ९ । २ |
| आमुमाहुलिपद्भवी | ३१ । १९ |
| आलिङ्गसे चाकलतां | ९७ । २९ |
| आलिङ्गिताः परैर्यान्ति | ११२ । ४४ |
| आधयः क्रियतामेव | १०४ । ७६ |
| आस्तां भवान्तरविधौ | ९० । ४७ |
| आहादयत्वेव सारैः | २ । ११ |
| उक्तं यत्कृपणं वचो | ५९ । ४३ |
| उच्चैस्तरादम्बरशालमाले | ६७ । ४८ |
| उत्खात निधिशङ्कया | ८९ । ४२ |
| उत्पाय इदि स्त्रीदन्ते | ११३ । ५९ |
| उरफुल्लगर्गरालाप | ११७ । ८२ |
| उरसार्य कुन्तलमुपास्य | ६० । ३ |
| उत्पद्युमम्बुजदशा | ८२ । ३३ |
| उदयद्वक्षोजद्वय | ३१ । १७ |
| उदयति तरणिभतरणी | ३१ । १३ |
| उद्धूयेत तनुलता | ४० । ६ |
| उद्भिदुर स्तनवदनं | ७४ । १७ |
| उद्यद्भिषि दुर्दुरारवपुषि | ४८ । १२ |
| उद्यद्भिषेकतपन | ८८ । ३५ |
| उद्यन्महोपालमरीचि | ११७ । ८९ |
| उपगूहति दवदहने | ११६ । ७६ |
| उपनदपुलिने | ९५ । १६ |
| उपभुक्तखदिरवीटक | ८४ । ३ |
| उपरिस्था भक्तिरन्ता | ८८ । ३७ |
| उपश—विद्या | ९१ । ५९ |
| उमातिनां समुद्रीक्ष्य | ११९ । ९१ |
| उरोरुहाम्भोरुहदर्श | ५६ । २२ |
| उपति भ्रमरयुवानः | ८१ । २७ |
| ऊरीकृतुं बुद्धिनिर्करण | ९ । ४७ |
| ऊर्ध्वोक्तप्रीत | ९८ । ३५ |
| इतलसद्भिद्वतम्— | ३७ । ६२ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. | पृ. श्लो. | |
|-----------------------------|-----------|----------------------------|---------|
| इदं नभसि भीषणभ्रमद | ६७। ५२ | कल्पद्रुमोऽपि कालेन | ९३। ३ |
| इयं चिद्रूपापि प्रकट | ८। ४२ | कलोलसंचलदगाध | १००। ५० |
| इयं धत्ते धीरे मलयज | ३९। २ | कवयः परितुष्यन्ति | ११८। ८३ |
| इयं पादो भिद्यैः | ९८। ३९ | कविलप्रोद्गुम्फश्रवण | १। २ |
| इयं बाला पद्मो | ९६। २१ | कथिन्नवपह्नव | ९५। १८ |
| इयं संध्यातल्पं किमकृत | ६९। ५ | कस्तूरी जायते कस्मात् | १०८। १९ |
| इह तुरगशतैः प्रयान्तु मूढाः | ११५। ६८ | काम्यो कार्म्यो न धत्ते | १८। १३ |
| इह महिषविषाण | ११६। ७४ | काम्योदाम निवेशयन् | ४९। १७ |
| एक एव खगो मानी | ९८। ३६ | कान्ते कलितचोलान्ते | ५६। २३ |
| एकत्र कीलमतभङ्ग | ६८। ५८ | कान्ते नितान्तं दयिता | ५६। २१ |
| एकस्त्वमावहति | ९०। ४८ | कापूरपः कुकुरध | ११४। ६३ |
| एकानपाङ्क्तिरपरांस्तरङ्गै | ५२। ४१ | कामं कामदुषं भुङ्क्ते | १०९। २४ |
| एकान्तमुन्दरविधानजडः | २९। ४ | कामं वनेषु हरिणास्तृणेन | ९१। ५७ |
| एणाद्याः परिपन्ना | ९४। ८ | कामसंगरविधौ मृगीदशः | ५९। ४१ |
| एतरपुरः स्फुरति | ७३। ५ | कामस्य जेतुकामस्य | ८२। ३२ |
| एते वारिकर्णान्किरन्ति | ५१। ३२ | कामिनो हन्त हेमन्त | ८०। १६ |
| एतस्य रहसि वक्षसि | ७३। ९ | क मेघादुपयाति कृष्ण | १०९। २७ |
| एनं विहाय तुलसी— | ६६। ४३ | कामेन कामं प्रहिता जवेन | ७५। २३ |
| एष एव मनस्तापः | १०३। ६९ | किं कवेस्तस्य काव्येन | ११७। ८१ |
| ओंकारो यस्य कन्दः | ५। २८ | किं कोमलैः कलरवैः | ९७। ३३ |
| कण्ठस्य विदधे कान्ति | ३५। ४१ | किं कीमुदी शशिकला | २९। ३ |
| कनकमृगमुदस्य | ८४। ६ | किंचित्कोपकलाकलाप | ८७। २१ |
| कन्याखण्डमिदं प्रवच्छ | ११३। ५५ | किं जातोऽसि चतुष्पये | ९५। २० |
| कमलाकुचकनकाचल | ५। २४ | किं तेन हेमगिरिणा | १०१। ५५ |
| करं प्रसार्य रविणा | १०६। ८९ | किं त्वं निगूहसे दूति | ५४। १० |
| करवारिरुहेण संधुनाने | २३। ३९ | किंवा परेण बहुना | १११। ३५ |
| कर्णेन निर्मितोऽस्मीति | १०७। ६ | किंशुके शुक्र मा तिष्ठ | ९५। १५ |
| कर्णौ तावत्कुचलयदृशां | ३३। २८ | किमकारि मन्दमतिना | ४३। ३ |
| कलभाः पाकविनम्रा | ७९। ७ | कियद्द्वारं वारस्थित | ९७। २८ |
| कलाधिनाथानयनाय सायं | ७१। १७ | कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलया | १४। २९ |
| कलास्तास्ताः सम्यक् | १०५। ८३ | कुचौ तु परिचर्चितौ | ९२। ६५ |
| कल्पद्रुमोऽपि कालेन | ९२। ६४ | | |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-----------|--------------------------|-----------|
| कुन्दं दन्तैर्मधुनि गदितैः | ४६ । २० | क्षीणांशुः शशलाञ्छनः | ६० । २ |
| कुरात्रीणां यूयं | १०१ । ५७ | क्षुश्रामोऽपि जराकृशोऽपि | १०२ । ६० |
| कुरवककुवाधातक्रीडा | २६ । २० | क्षोणीकाम निजामशाह | १३ । २४ |
| कूर्मः पादोऽत्र यष्टिः | १३ । २६ | क्षोणीकाम निजामशाह | १६ । ४ |
| कुचलयनयनाकुचान्त | ४५ । १६ | क्षोणीकाम निजाम | २० । २६ |
| कृत्वा सिंहकलेवरं | ५ । २५ | क्षोणीपर्यटनप्रते | ११ । २० |
| कृपाणकिरणानलं | २२ । ३३ | क्षोणीपाल त्वदरिहरिणी | २६ । ५७ |
| कृष्णं समरसतृष्ण | १६ । ३ | क्ष यान्ति नो नीरधरा | ४४ । ८ |
| केनाप्यनयंरुचिना | ९० । ५१ | खद्योतपोतप्रकराः | ७७ । ३७ |
| केय माता पिशाची | ८६ । १७ | खद्योतो द्योतते | १०५ । ८७ |
| केलिं कुरुष्व परिमुद्स्व | १०२ । ६३ | खलानां कण्टकानां च | ११४ । ५९ |
| केशः कुन्दमिषादिवो | ५१ । ३१ | ख्याता वयं समधुपा | ७१ । १५ |
| कोकानुश्रीवयन्तः | ६२ । १४ | गगनविपिनसिंहः कामभू | ७० । ८ |
| कोकः स्तोत्रविमुक्त | ५१ । ३० | गच्छ गच्छसि चेतकान्त | ४८ । ११ |
| कोदण्डं न ददाति | २२ । ३७ | गजस्य पद्ममग्नस्य | १०३ । ७० |
| कोदण्डस्तव हस्तगो | २२ । ३६ | गणेश्वरकवेर्वचो | ११८ । ८९ |
| कोपं चम्पक मुख | ९३ । ६ | गणेशुत्तमां याति | १११ । ३४ |
| कोपो यत्र भ्रुकुटिरचना | ५५ । १३ | गतप्राया रात्रिः शशिमुखि | ६० । १ |
| कोपे पयसि लपीयसि | १०२ । ६४ | गताः केचिप्रबोधाय | ८४ । ४ |
| क्रीडन्नयानवधा | ४ । २१ | गतायतकुतूहल नयनयोः | ४६ । ४ |
| क्रीडाकारि तडागवारिणि | १०२ । ६२ | गन्तु यदि व्यवसितासि | ६८ । ५६ |
| क्रीडानुत्तररत्नटाप | ८६ । १८ | गम्भीरनाभीहृदसंवि- | १७ । ५७ |
| क्रीडामूलं दुकूल | १६ । ३९ | गाढे तमसि सरन्ती | ६७ । ५३ |
| क्रीडामु सत्रीडमहो विलासा | ७५ । १९ | गेहे गेहे सुमगसुहृशो | १७ । ५ |
| क्रोधं तातस्य गच्छन् | ६ । ३१ | घनतरपनवृन्दच्छादिते | ७६ । २८ |
| क्रीडः श्रीडतु कूर्दतां | १०० । ४८ | घनतरपनवृन्दच्छादिते | ७६ । २९ |
| कचित्कृष्णार्जुनगुणा | ३४ । ३३ | घनोद्गमे गाढतरेऽन्धकारे | ७६ । ३० |
| क्षणे कान्ताराग | २५ । ५२ | घनोऽयं चेदधेत | ४० । ४ |
| क्षत्रियस्योरसि शत्र | २३ । ४२ | घात तालफलाशया | २६ । ६१ |
| क्षपा क्षामीकृत्य प्रधम | ७७ । ३५ | चयला दहति शत | ६ । २९ |
| क्षितिप किमपि चित्रं | १४ । २७ | चमद्भुजप्रमित | ८६ । १६ |
| क्षीणः क्षीणः समीपलं | १०५ । ८५ | चन्द्रबिम्बरविबिम्बतारका | ७६ । ३२ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-----------|
| चन्द्रे गते सभिकतामिद | ४२।१८ |
| चन्द्रोऽनेन कलङ्कितो | ६०।५ |
| चमूभरन्यधदुदय | ७८।४० |
| चरमगिरिनिकुञ्जमुष्ण | ८८।३९ |
| चल चेतः पुंसां सहज | ११५।७० |
| चलद्वलाकादशनाभिराम | ८३।३८ |
| चित्राय स्वयि चिन्तिते | ८८।३९ |
| चित्राय स्वयि चिन्तिते | ९।३ |
| चित्रोत्कीर्णादपि विपधरात् | १०७।५ |
| चिरं ध्याता रामा | ३०।८ |
| चिरं युद्धा | १०६।२ |
| चिराशुपेतः प्रथमं प्रदान | ३५।४० |
| चुम्बनेषु परिवर्तिता | ३५।४६ |
| चुलुक्यसि चन्द्रदीपिति | ४४।१२ |
| चूडारत्नमपांनिधि | ३८।६२ |
| चूतानां चिरनिर्गतापि | ३७।५४ |
| चैत्यैरादपि शङ्कसे | ४२।१९ |
| चोलाक्षलेन चलहारलता | ३५।३९ |
| चोलाक्षना कुचनिचोल | २४।४९ |
| चोली चोली ननु कल— | १०३।६८ |
| जडता जडतामम्य | ७०।११ |
| जनस्थाने भ्रान्तं | ३४।३६ |
| जनिः सरोऽङ्गादति | ४७।६ |
| जन्तुः संसारकान्तारे | ११८।८६ |
| जम्भेदं दध्यतां नीतं | ७८।५ |
| जाता शिखण्डिनी प्राग् | १११।१४ |
| जातिर्यानु रसातलं | ३७।५२ |
| जानीमस्वव गौरि | ८०।१९ |
| जानीमो वदनं सरोरुह | २३।४१ |
| जानीमो वयमास | १०३।७२ |
| जाने युध्मत्प्रयाणे | ११८।८८ |
| जाने कोपपराञ्जुखी | १०९।२१ |
| जीवेन तुलितं प्रेम | |
| ज्ञज्ञानिलोऽपि मुरतान्त | |
| तटमुपगतं पद्मे पद्मे | |
| तन्मनस्विन्मनः स्वीयं | |
| तपोवने केसरिणीकरिण्यो | |
| तप्ता मही विरहिणा | |
| तरले जीवने जन्तुः | |
| तर्कज्ञानां तर्कसाह्यार्क | |
| तर्तु पर्वतसंनिभेन | |
| तथ कुवल्याक्षि | |
| तवानने मानिनि | |
| तवैष विद्रुमच्छायो | |
| तवोपकण्ठस्थिततार | |
| तस्मिन्काले जलद | |
| तस्याः पद्मपलाशाक्ष्याः | |
| तस्या मुखेन्दोरबलो— | |
| तस्याः स्तनी विरहता— | |
| ताटङ्गमस्यास्तरलेक्षणायाः | |
| तादृग्दण्डविवर्तन | |
| तापो नापगतस्तृषा | |
| ताराक्षतान्प्रविकिरन् | |
| तारापतेर्विम्बमिव | |
| तारुण्य मुखमण्डलेन | |
| तावत्कविषिद्वह्नानां | |
| तीक्ष्णं रविस्तपति नीच | |
| तुङ्गवद्वाण्डसिंहसन | |
| तुङ्गाभोगे स्तनगिरि | |
| तुषारभारविभुष्ण प्रेक्ष्य | |
| ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो | |
| ते ते चातकपोतका | |
| ते भूमीपतयो जयन्ति | |
| त्रियामा शतयामा स्वात् | |

| पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. | |
|----------------------------|----------|--------------------------|----------|
| कुन्दं दन्तैर्मनुनि गदितैः | ४६ । २० | क्षीणांशुः शशलाञ्छनः | ६० । २ |
| कुरङ्गीणां यूयं | १०१ । ५७ | क्षुत्सामोऽपि जराकृशोऽपि | १०२ । ६० |
| कुरचककुचाघातकीडा | २६ । २० | क्षोणीकाम निजामशाह | १३ । २४ |
| कूर्मः पादोऽत्र यष्टिः | १३ । २६ | क्षोणीकाम निजामशाह | १६ । ४ |
| कुवलयनयनाकुचान्त | ४५ । १६ | क्षोणीकाम निजाम | २० । २६ |
| कृत्वा सिंहकलेवरं | ५ । २५ | क्षोणीपर्यटनप्रते | ११ । २० |
| कृपाणकिरणानल | २२ । ३३ | क्षोणीपाठ स्वदरिहरिणी | २६ । ५७ |
| कृष्णं समरमतृष्ण | १६ । ३ | ख यागति नो नीरधरा | ४४ । ८ |
| केनाप्यनयैरुचिना | ९० । ५१ | खद्योतपोतप्रकराः | ७७ । ३७ |
| केय माता पिशाची | ८६ । १७ | खद्योतौ द्योतते | १०५ । ८७ |
| केलिं कुदृष्ट परिभुङ्क्व | १०२ । ६३ | खलानां कष्टकानां च | ११४ । ५९ |
| केशः कुन्दमिषादिवो | ५१ । ३१ | ख्याता वयं समधुषा | ७१ । १५ |
| कोकानुग्रीवयन्तः | ६२ । १४ | गगनविपिनसिंहः कामभू | ७० । ८ |
| कोकः श्लोकविमुक्त | ५१ । ३० | गच्छ गच्छसि चेतकान्त | ४८ । ११ |
| कोदण्डं न ददाति | २२ । ३७ | गजस्य पङ्कमप्रस | १०३ । ७० |
| कोदण्डस्तत्र हस्तगो | २२ । ३६ | गणेश्वरकवेर्वचो | ११८ । ८९ |
| कोपं चम्पक मुञ्च | १३ । ६ | गणेश्वरतुङ्गतां याति | १११ । ३४ |
| कोपो यत्र भृकुटिरचना | ५५ । १३ | गतप्राया रात्रिः शशिमुखि | ६० । १ |
| कीपे पयसि लघीयसि | १०२ । ६४ | गताः केचित्प्रबोधाय | ८४ । ४ |
| कीडघटानवशा | ४ । २१ | गतागतकुतूहलं नयनयोः | ४६ । ४ |
| कीडाकारि सङ्गावबारिणि | १०२ । ६२ | गन्तुं यदि व्यवसितासि | ६८ । ५६ |
| कीडातुङ्गतरुजटाप | ८६ । १८ | गम्भीरनाभीहृदसंवि- | ३७ । ५७ |
| कीडामूल दुकूलं | १६ । ३९ | गाढे तमसि खरन्ती | ६७ । ५३ |
| कीडासु रात्रीडमहो विलासा | ७५ । १९ | गेहे गेहे सुभगमुदशो | १७ । ५ |
| कोटं तातस्य गच्छन् | ६ । ३१ | घनतरपनमृन्दच्छादिते | ७६ । २८ |
| कौशः श्रीडनु फूर्दतां | १०० । ४८ | घनतरपनमृन्दच्छादिते | ७६ । २९ |
| कचित्कृष्णार्जुनशुणा | ३४ । ३३ | घनोद्रेमे गाढतरेऽन्धकारे | ७६ । ३० |
| क्षणे कान्ताराग | २५ । ५२ | घनोऽयं चेदक्षेत् | ४० । ४ |
| क्षत्रियस्योरति क्षत्र | २३ । ४२ | प्रातं तालपलाशया | २६ । ६१ |
| क्षपां क्षामीकृत्य प्रथम | ७७ । ३५ | वयत्या दहति क्षत | ६ । २९ |
| क्षितिप किमपि विधे | १४ । २७ | चयद्भुजप्रसित | ८६ । १६ |
| क्षीणः क्षीणः समीपलं | १०५ । ८५ | चन्द्रचिम्बरविचिम्बतारका | ७६ । ३२ |

| | | | |
|----------------------------|-----------|-----------------------------|-----------|
| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
| चन्द्रे गते समिकतामिदं | ७९। ९ | जीवेन तुलितं प्रेम | ४२। १८ |
| चन्द्रोऽनेन कलङ्कितो | ११७। ७९ | झञ्झानिलोऽपि सुरतान्त | ६०। ५ |
| चमूभरन्ध्रदुदध | १०७। ३ | तटमुपगतं पद्मे पद्मे | ७८। ४० |
| चरमगिरिनिकुञ्जमुष्ण | ६७। ५१ | तन्मनस्विगमनः स्वीयं | ८८। ३९ |
| चलं चेतः पुसां सहज | ५३। ४ | तपोवने केसरिणीकरिण्यो | ११५। ७० |
| चलद्दलाकादशनाभिराम | ७५। २५ | तप्ता मही विरहिणा | ८३। ३८ |
| चित्राय स्वयि चिन्तिते | ४०। ७ | तरले जीवने जन्तुः | ८८। ३१ |
| चित्राय स्वयि चिन्तिते | १०८। १४ | तर्कज्ञानां तर्कशास्त्रार्क | १। ३ |
| चित्रोत्कीर्णादपि विपचराद् | ६७। ५४ | तर्तु पर्वतसंनिभेन | १०७। ५ |
| चिरं ध्याता रामा | ९२। ६६ | तव कुबलयाक्षि | ३०। ८ |
| चिरं बुद्ध्या | ९३। १ | तवानने मानिनि | १०६। २ |
| चिरादुपेतः प्रथमं प्रदान | ७३। ६ | तवैव विदुमच्छायो | ३५। ४० |
| चुम्बनेषु परिर्वर्तता | ४९। २० | तवोपकण्ठस्थिततार | ३५। ४६ |
| चुलुक्यसि चन्द्रदीधिति | ४०। ५ | तस्मिन्काले जलद | ४४। १२ |
| चूडारजमपानिधि | ४२। १७ | तस्याः पद्मपलाशाक्ष्याः | ३८। ६२ |
| चूतानां चिरनिर्गतापि | ८१। २४ | तस्या मुखेन्दोरवल्लो- | ३७। ५४ |
| चैत्परावपि बाह्वसे | ५२। ३९ | तस्याः स्तनौ विरहता- | ४२। १९ |
| चैलायलेन चलहारलता | ६५। ३६ | ताटङ्कमस्यास्तरलेक्षणायाः | ३५। ३९ |
| चोलाहना कुचनिबोल | ६१। ९ | ताटङ्कदण्डविवर्तन | २४। ४९ |
| चोली चोली नतु कल- | १७। ९ | तापो वापगतस्तृपा | १०३। ६८ |
| जडता जडतामम्य | ८। ४३ | ताराक्षतान्प्रविकिरन् | ७०। ११ |
| जनस्थाने भ्रान्त | ११३। ५२ | तारापतेर्बिम्बमिव | २४। ३६ |
| जनिः सरोऽङ्गादति | ९६। २५ | तारुण्यं मुखमण्डलेन | ४७। ६ |
| जन्तुः संसारकान्तारे | ८८। २९ | तावत्कविविद्गानां | ११८। ८६ |
| जन्मेदं बध्यतां नीतं | ९१। ५६ | तीक्ष्णं रविस्तपति नीच | ७८। ५ |
| जाता शिखण्डिनी प्राणू | ११८। ८५ | तुङ्गमक्ष्माण्डसिंहासन | ११। १४ |
| जातिर्यातु रसातलं | १११। ४० | तुङ्गभोगे स्तनगिरि | ३७। ५२ |
| जानीमरुष गौरी | ४२। २२ | तुषारभारमिश्रुणं प्रेक्ष्य | ८०। १९ |
| जानीमो वदनं सरोरुह | ३९। ६६ | ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो | २३। ४३ |
| जानीमो वयमास | ३९। ६५ | ते ते चातकपोतका | १०३। ७२ |
| जाने युध्मतप्रयाणे | १७। १० | ते भूमीपतयो जयन्ति | ११८। ८८ |
| जाने कोपपराधुखी | ४५। १५ | त्रियामा शतयामा स्यात् | १०९। २१ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|-----------------------------------|-----------------------------------|
| त्वं क्षति निरगाः कुर्ष | दुग्धाम्भोधेः परिचुलकनं ५। ३ |
| त्वत्प्रीतिर्मौक्तिकफलानि १०८। १५ | दुर्दिवसे घनतिमिरे ५२। ३६ |
| त्वत्प्रतापानलज्वाला १३। २५ | दुःसहसंतापमयात् ६२। १८ |
| त्वत्प्रतापार्कबिम्बेन १४। २८ | दग्ध्या यस्य विलोकनाय २। ८ |
| त्वद्विरुपतिकेली २८। ६९ | दृष्ट्वा पतिः पद्मदशं ७३। ७ |
| त्वद्विरुपतिमाशा २४। ५० | दृशा विदधिरे दिशः ६६। ४४ |
| त्वदीयमुखपङ्कजं ५५। १७ | दृशा सपदि भीलित ५६। १४ |
| त्वद्याने बाजिराजि १८। १२ | दृशौ किमस्याथपलाय- ३४। ३१ |
| त्वद्विरिणो दूरपला- २८। ७२ | दृश्य चेन्मुखपङ्कजं ५५। १८ |
| त्वद्वैभवलिखित २८। ७० | देव क्षोणितल्यधिपे १४। ३० |
| त्वमद्य सिन्धो जगदेक ६९। ४४ | देव त्वरकरनीरदे १५। ३६ |
| त्वमध्वनीनाध्वनि ९५। १७ | देव त्वद्यशसा १०। ६ |
| त्वमेव त्वातकाधार १०५। ८० | देव त्वद्विजये १८। ११ |
| तथा वीरगुणाकृष्टा १५। ३७ | देहं हेमश्रुति ३७। ५१ |
| त्वामालिङ्ग्य प्रणयकुपिता ४४। ११ | देहे दुर्ललितस्य ५०। २७ |
| एक्षिणाशाप्रवृत्तस्य १०६। ८८ | देहाशां विह्व राज्ञां ८५। १५ |
| दत्तं करं वक्षसि ४९। २१ | देवाद्धनेष्वधिगतेषु ८९। ४६ |
| दधत्प्रधरचुम्बनं नयन ८०। १५ | दोलायमानाः प्रियतुल्यमानाः ६६। ४६ |
| दयिताबाहुपाशस्य ३५। ४४ | द्राक्षां प्रदेहि मधु वा ९८। ४० |
| दरिद्रजनरञ्जनस्तव ७। ३५ | द्वारे खड्गमिराकृतं २५। ५० |
| दद्यान्मुखभजमानिहीनः (!) ७६। २७ | द्वारि स्तम्भविलम्बा ४८। १५ |
| दानार्थिनो मधुकरा १०२। ६५ | द्वारे कल्पतरुं गृहेषु ३। १६ |
| दाने द्राघीयसि १४। ३२ | धनमर्जय द्राक्षस्व ११२। ४३ |
| दामोदरकराघाते १०७। १३ | धन्योऽसी पौत्रिणीपुत्रो १०७। १० |
| दासेरकस्य दासीयं ९४। १३ | धर्मे सक्तिर्भवे भक्तिः ८८। ३८ |
| दिग्बालाकरकन्दुकः ७०। १२ | घाटीयेतोभवनर ४१। ४३ |
| दिदृक्षमाणः दणमायताक्ष्या ७५। २० | धीरसिंहारिनारीणां २६। ५८ |
| दिवसे पटिकाविशाल ५१। ३४ | धुन्वन्त्या करपल्लवं ७३। १० |
| दिव्यवधुरहं जातः ४३। २ | धूलीभिर्दिवमन्धयन् १९। २१ |
| दिव्यहरेर्मुसकुहरे ८७। २६ | नतभ्रूवो लोचनराज ३४। ३० |
| दीपाद्गुरः स्फुरति ४९। २२ | न तारकपूरे न च १४। १२ |
| दुग्धाम्भोधावगाधे ९। ५ | न दम्भुरगुरःस्थलं ३०। ११ |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|--------------------------|-----------|--------------------------|-----------|
| न नीलमुपनासिकं | ५४। ८ | नीराणि नक्रवडवानल | १०५। ८६ |
| नभोलताकुञ्जमुपागतायाः | ७०। १० | नीरात्तीरमुपागता | ५०। २३ |
| नमस्तस्मै करालाय | ८७। २७ | नूनं कलत्राकिमुपद्रुतो | ३६। ४० |
| नयनस्य तुलां चक्रे | ३३। २९ | नूनमूषद्वयं तस्या | ३८। ६३ |
| नयनोत्पलजलधारा | ४१। १५ | नृपतिनिजामचमूचर | १९। १७ |
| नराः संसारकान्तारे | ८८। ३० | नैतस्य प्रसरद्वयेन | ६६। ४२ |
| नरावैफलजन्मभिः | ५६। १९ | नैवालवालवल्लयं | १०४। ७५ |
| न शीलं दुरभङ्गी | ३०। १० | नैपा वेग मृदुतरतनुः | ५७। २८ |
| न स्थातव्यं न गन्तव्यं | १११। ३६ | नो तावत्कलयामि | २१। २९ |
| नायं मुद्यति सुध्रुवामपि | ४७। ८ | नौद्य दुर्जनजिह्वा च | ११४। ६० |
| नारीणां खलबन्धुर | ५२। ३८ | पतितैः सिरीपरजसां | ६४। २९ |
| नारीणां वचनेन कर्म | ११४। ६२ | पत्युः प्रवृत्तस्य रतौ | ५८। ३१ |
| नालिहन्ति पयोधरौ | २५। ५१ | पदन्यासो गेहात् | ४६। ३ |
| नाशिष्यः किमभूदुवः | ३। १५ | पद्मायास्तनहेमसम्पनि | ८। ४१ |
| निजामवसुधाधिपे | १९। १८ | पपात गङ्गा हरमौलि | ५९। ३८ |
| निदाघकाले किल | ८२। ३५ | पपात मेरोः सुरसिन्धु— | ५८। ३६ |
| निद्रितस्य बत शम्बर | ७६। ३३ | पयोदजालजम्बाल | ७८। २ |
| निधानमानन्दनिधे | ९२। ६८ | पयोधरस्तावदयं | ३८। ६१ |
| निपीय पीयूषमयूख— | ७१। १९ | पयोधराकारधरो हि | ६५। ४१ |
| नियमितपायोनिधिना | ४। १९ | परस्पराल्लेपवशं गता— | ६३। २५ |
| निर्णेतव्यो मनसिज | ३७। ६० | परस्परेण क्षतयोः | २३। ४० |
| निर्मासं मुखमण्डले | २०। २३ | परिभ्रमन्त्या भ्रमरी— | ६४। ३५ |
| निर्वेदः सरसीरुहस्य | ७०। ९ | परिभ्रानं पीनस्तन | ४०। ८ |
| निशम्य केलीभवनोप— | ७५। २१ | परिहरति वयो यथा यथा | ३१। १४ |
| निशाधिनायस्य कराभि— | ६९। ७ | परीक्ष्य सत्कुलं विद्यां | ११३। ५३ |
| निःशेषच्युतचन्दनं स्तन | ५४। ११ | पर्यस्तालकगण्डपालि | ७४। १३ |
| निषेवन्तामेते वृषमहिष | १०३। ६६ | पाणौ पद्मधिया मधूक | ६४। ३२ |
| निष्पात्ताशु हिमांशु | ४। २० | पायोधरीयपटलेन | ७७। ३८ |
| निष्पीतपीनतिमिराणि | ९९। ४३ | पायं दुग्धाम्बुधिरपि | ९। ४ |
| निष्पीते कलशोद्भवेन | २१। ३२ | पायान्मायाजरठकमठा | २। ७ |
| निहत निहत तूषे घत्त | ११७। ७८ | पायान्मायामृगेन्द्रो | २। १२ |
| नीरं दूरं तदपि विरसं | १०४। ७३ | पित्रोर्नैव वचः शृणोति | ११४। ६१ |

| | | | |
|---------------------------|--------|-----------------------------|--------|
| पिपासुरिव संचल— | ३४।३२ | बीमत्साधिपया | ९०।५२ |
| पीत्वा गर्जन्यपरस्ते | ९९।४५ | मत्के द्वेयो जडे प्रीतिः | ११२।४३ |
| पुच्छं चेदहमुत्क्षिपामि | १।६ | भङ्क्त्वा भोक्तुं न भुञ्जे | ६९।२ |
| पुनः पुनर्भुवि क्षिप्तः | ८८।२८ | भङ्गद भङ्गुरं भोगं | ८८।३४ |
| पुनरपि मिलनं यदा | ४५।१७ | भट्टैर्भिन्नाः प्रतिनृपतयः | २२।३४ |
| पुत्रमन्दिदरकलत्र | ९२।६७ | भवत्तुरगनिपुर | २३।४४ |
| प्रकटयति वियोगिप्रेय | ६७।४९ | भानोः पादैर्दहनपरुषैः | ६३।२३ |
| प्रतप्तायः पिण्डाविच | २९।२ | भामिन्यो विदधतु | ५२।४० |
| प्रतिनगरमदन्ती | ११।११ | भालस्थलीचन्द्रकलाकलह | ३२।२२ |
| प्रदोषमातङ्गमनङ्गदेवः | ७१।१४ | भित्तौ भित्तौ प्रतिफल— | ७२।२१ |
| प्रबोधभाजः परमस्य | ७९।८ | भिक्षित कमलकुटुम्भा | ६०।६ |
| प्रयाप्ति पान्थासस्वरया | ८२।३० | भुक्तानि वैस्तव फलानि | ९५।१९ |
| प्रवर्तस्वेति को नाम | ११९।९२ | भूषन्मोलितटीपु | २०।२४ |
| प्रविशति हरिताभः | १०७।४ | भूयादेय सतां द्विताय | २।१० |
| प्रशान्ते नूपुरारावै | ५८।३२ | भृङ्गीरवो मङ्गलगीत | ८२।२९ |
| प्रस्थानं रतिमन्दिरात् | २७।६३ | भेकैः कोटरराशिभिः | १०४।७७ |
| प्रस्थानं बलयैः कृतम् | ४७।९ | भेरीभाङ्गतिभिस्तुरङ्ग | १८।१६ |
| प्रागल्भ्यं प्रथमन्यशो | ११४।६४ | भ्रमचरणपद्मवक्त्र | ६५।४० |
| प्राचीमहीधरशिला | ७७।३९ | भ्रमन्वनान्ते नवमञ्जरीपु | ९३।५ |
| प्राज्ञः कापि प्रतिज्ञापि | १।५ | भ्रमात्यकीर्णं भ्रमरीपु | ६४।३४ |
| प्रातः प्रकाशमहिफेन | ८३।१ | भ्रान्त्वा भूवलयं | ११।१३ |
| प्रातः स्मेरसरोरुहामय | ३१।१ | भ्रूरेखासुगल भाति | ३३।२७ |
| प्रावृषेभ्यस्य मालिन्यं | १०५।७९ | मज्जन्त्या रससिन्धौ | ५८।३० |
| प्रियतममज्जतयौवन | ७४।१५ | मत्तेभकुम्भपरिणाहि | ५९।३९ |
| प्रियसखि न तथा | ४२।२३ | मदकलकृतान्तकासर | ४२।२१ |
| प्रियो मयेवौऽवचितैः | ५१।२८ | मदनमवलोक्य निष्फल | ९६।२७ |
| प्रेरयन्ति हृदयं न लोचनं | ४६।२ | मदानने जुम्भनचय | ५०।२५ |
| फेत्कारकृत्फेदभि | ८७।२२ | मद्गोः शङ्खं सप्ततालप्रमाणं | १०९।२२ |
| वन्धुव्रजैः सुभट | ८९।४५ | मधुपानसमुद्रसत्प्रवालं | ५४।३५ |
| बालक्रीडनमिन्दुसेसर | ४।१८ | मध्याह्नीयुषि रवौ | ६२।१९ |
| बाले तवोरोजमुपेक्ष | ३७।५५ | मध्याह्ने नूनमापोऽपि | ६२।२० |
| बाह्यः परिग्रहविधिः | ९०।४९ | मध्योऽयं वलिसद्य | ३५।४८ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-----------|
| मन्दं निधेहि चरणौ | ६८।५७ |
| मन्द मन्दं ध्वनति जलदो | ७७।३६ |
| मन्दानिलाहतविलोल | १०८।१७ |
| मन्येऽरण्ये कुलगिरि | १०।७ |
| मम प्रियां कैरविणीं करेण | ७१।१६ |
| मध्यायाते सपदि शयना | ४७।७ |
| मलयपवनचञ्चन्द्र— | ८३।४१ |
| मल्लीमाल्यधिया | ५।२७ |
| महता पण्यपुञ्जेन | ९१।५८ |
| माकन्द क्षिप मामरन्द | ४४।१७ |
| मातङ्गकुम्भसंसर्गं | ३५।४२ |
| माध्वीकदुर्भिक्ष | ८३।३७ |
| मायया कपिता ह्येते | ८८।३३ |
| मायायद्भकुतुहले | ४।२२ |
| माला वालाम्बुजदलमयी— | ५४।७ |
| मिलितमिहिराभासं | २२।३५ |
| मिश्रितोरुमिलिताधरं | ५९।४३ |
| मुक्ते काञ्चनकुण्डले | ६५।६७ |
| मुख प्रियायाः समुदीक्षमाणः | ७५।२२ |
| मुखे हारावाप्तिर्नयन— | २६।५९ |
| मुहुर्नयनवीजनैः | ५४।९ |
| मूर्ध्नः शीतरुचः कलां | ८।४६ |
| मूर्ध्नो मग्मथशासिनुः | ६।२२ |
| मृगसहितं मृगलाञ्छन | ११६।७२ |
| मृगाङ्गमागतं वीक्ष्य | ६७।५० |
| मृत्युः शरीरगोप्तरं | ११२।४९ |
| मृत्योर्विभेमि किं मूढ | ९१।६१ |
| मेखलीयति मेदिन्याः | १९।२० |
| मौलिं मानविधिं विना | २७।६५ |
| म्लायद्रुक्तरुचः | १५।३४ |
| यः स्त्रोद्धाराय शृङ्गाति | ८८।३२ |
| यत्करोत्यरतिहृष्टं | ११२।४८ |
| यत्पादाः शिरसा | १०६।९० |
| यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति | ४५।१३ |
| यत्रासण्डलदन्तिदन्त | १०८।१८ |
| यत्रालसा हरिणश्चात्र | ७१।२० |
| यदर्थ्यते परिक्रेशे | ११२।४७ |
| यदाभूदस्माकं प्रथम— | ५५।१४ |
| यदि प्राप्नोति मां तन्वी | १०७।७ |
| यदि समरमपास्य | २३।४३ |
| यदीयसौधस्फुरदिन्द्र— | ७२।२३ |
| यदेतल्लवण्य | ७।३८ |
| यद्यध्वनीन चिरमध्वनि | ९४।५१ |
| यद्यपि न भवति हानिः | ९५।१४ |
| यद्यपि बहुगुणगम्यं | १०१।५३ |
| यद्वैभवाय निजवैरिणि | १००।५१ |
| यवनीनयनाम्बुधोरणी | ४।२३ |
| यशःकिरणधोरणी | १५।३३ |
| यशोधननिधेर्यदा | ११९।९० |
| यस्य क्षोणिपतेर्विहायसि | ११।१५ |
| यस्याः कुसुमशय्यापि | ८५।१२ |
| यस्यालीढमृणालतन्तु | २।९ |
| यस्यास्ति वित्तं स नरः | १११।४१ |
| या कामिनी सा यदि मानि— | ७६।३१ |
| याचितेन बहुचातक | ७७।३४ |
| यात्रामन्त्रलसंधिधान | ४७।१० |
| यस्याः संयमवान्कचोऽपि | ३२।२१ |
| याम्या दिशः संनिधि | ८१।२३ |
| यावत्सत्यमिदं शरीर- | ८९।४१ |
| यासां कटाक्षविशिखैः | ३४।३४ |
| युद्धकुद्धमटचिह्न | १०७।९ |
| युष्मद्दोर्दण्डमण्डल्य | २४।४५ |
| यूनां धैर्यतृणाङ्गरं | ३७।५९ |
| येनोद्गम्यात्त्वदरि | १३।२२ |

| | | | |
|-----------------------------|--------|-------------------------|--------|
| रक्तं नक्तचरौषः विप्रति | २४।४६ | लोकानां मानपात्रं | ११०।२८ |
| रघुतिलकनृपाल— | १२।१७ | वक्रत्न ननु कुन्तलादिव | ११३।५७ |
| रणत्कट्टणानां क्षणनूपुराणां | ८२।३४ | वक्षोजराण्डितमुरोज | ५३।३ |
| रतिरभसनितान्तश्रान्त | ५७।२९ | वक्षोजद्वयशीलनेऽपि | ७२।४ |
| रत्नेरापूरितस्यापि | ९९।४६ | वक्षाम्भोरुहपथकं | १।१ |
| रभसाद्भिसर्तुमुद्यता | ६८।५५ | वर्तत्तनीलोत्पलपट्पद | ३४।३५ |
| रम्भोरुदेहपरिरम्भ | ६४।३३ | वष्पा वयो मां श्रिवली | ३७।५३ |
| राकावारापतिरुचि | २१।३० | वनी मुनीनां तटिनी | ४५।१४ |
| राजमन्त्रचण्डरुचिमण्डल | ११।१६ | वन्देऽहं कालिकामष्ट | ७।३७ |
| राजन्दिपस्ते भय | २५।५३ | वपुषि तव तनोति रत्न | ५३।३ |
| राजमन्त्रचण्डरुचिमण्डल | ११।१६ | वयं वास्ये बालास्तरुण | ५३।३७ |
| राजानः शशिभास्करान् | १६।१ | वर्षासु जाता नवयौवनध्री | ७६।२६ |
| राजेति क्षणदाकरं | १०।१० | वल्लकुचं व्याकुलकेशपाशं | ५८।३७ |
| रामे भ्रातृगणवेषधारिणि | २।१४ | वल्मीकाप्रतिममूर्ति | ११५।६९ |
| रेखा काचन कञ्जलस्य | ३०।९ | बहद्बलमादतप्रसर | ६३।२२ |
| रे पद्मिनीपत्र भव— | ९६।२३ | व.....हरकिंसलयो | ७३।८ |
| रेरे रञ्जाल तरुञ्जाल | ९४।१० | वाणी कण्ठाभरण | १०।९ |
| रे सारङ्गा वनवसतयः | ४४।९ | वातं स्थावरयन् | १९।१९ |
| रोहणाचलक्षैलेयु | १०१।५६ | वादानाशानुपुष्पो नगर | ११०।२९ |
| रक्षि क्षमस्व वचनीय | ११२।४६ | वान्ति कटारसुभगा | ७९।६ |
| रक्ष्मीर्वादोनिधेर्वादो | ११२।४५ | वापीतोयं सटरुहवनं | ६८।१ |
| रक्ष्मीविभ्रमकुञ्ज | १५।३८ | वातो विधूय स्तनयोः | ६०।४ |
| रङ्गाधामनि वीरभानु | १३।२३ | वाहप्युहचुरक्षतां | १८।१४ |
| रङ्गा भौडमृगीदशाभिव | ७९।१३ | विकीर्णहरिचन्दन | ८७।२३ |
| रङ्गावशाभमितमन्थर | ४७।५ | विभ्रेशः सर्वविप्रान् | ६।३० |
| रतां पुष्पवतीं दृष्ट्वा | ६१।७ | विज्ञानु विज्ञाप्यमिदं | १।४ |
| रतामूले लीनो | ४१।११ | विद्वद्गोष्ठीगमिष्ठ | १०।८ |
| रवन्तलतिरामज्ञ | ६१।८ | विधे विधेहि शीतांशु | १०७।१३ |
| रघुन्महीमाल्य | ३९।१ | विषौ पुरस्थे | ९६।२२ |
| रिचति न गणयति | ४८।१३ | विना सायं कोऽय | ३३।२५ |
| लीलावसुन्सरोरुह | ४१।१६ | विनिर्गतं मानदमात्म | ८७।२४ |
| रुलाये गोमायी | १०३।६७ | वियोगार्तिनलिन्याः किं | ६३।१७ |

| | | | |
|------------------------|-----------------|-------------------------------|-----------------|
| विरमति कथनं विना | पृ. श्लो. ५३। ६ | शङ्गे शिरीषमालां | पृ. श्लो. ६। ३३ |
| विरम नाथ विमुच्य | ४९। १९ | सैलं नाम गुणसवैव | ११०। ५२ |
| विरलविरलीभूताः | ६१। १० | शोषं गते सरसि | १०४। ७८ |
| विलोक्य कमलाकान्त | ११६। ७१ | श्यामाकृतन्दुलविलेप | ११६। ७३ |
| विवेकविधुरं किल | ९३। २ | श्रीरुण्डद्रवदीर्घिका | ४२। २० |
| विहायसि विहारिणी | ५८। ३३ | श्रीरुण्डानिलनिर्वृतो | ४३। ५ |
| वीणावंशाधया तुम्बी | १११। ३७ | श्वधूः कुप्यतु निर्दिश | ५१। २९ |
| वीरक्षीरसमुदसातु | ११। १२ | संप्रामाङ्गणमागतेन | ८६। १९ |
| वीर त्वत्सङ्गधारा | २०। २५ | संतसायसि संस्थितस्य | १११। ३८ |
| वृथा धूलीधारा | १०५। ८९ | संस्पर्शजल्पे परिवृत्तवक्त्रे | ७४। ११ |
| शृन्देन तारावलि तन्दु | ६२। १५ | संनिगृह्य चिकुरं तमो | ६१। १३ |
| वैलक्ष्ण्यक्षति राजहंस | १८। १५ | संन्यासमाप काशी | ५७। २७ |
| व्यजनं व्यजनं जलं जल | ४१। ९ | संभावितो न तरणीकर— | ९३। ७ |
| व्यज्यमानकलङ्कस्य | १०५। ८४ | संमुख मुखविधु न मुग्ध | ७४। १६ |
| व्यतीतकल्पे शिशिरैक | ८१। २८ | संमूर्च्छित संयुगसंप्र— | २३। ३८ |
| व्याकोशकोकनदशोक | ३९। २ | संशोच्य शोकविदसौ | ९०। ५० |
| व्याग्रीव तिष्ठति जरा | ८९। ४० | संचारतापदहनैः | ८८। ३६ |
| व्यासादीन्कविपुङ्गवान् | ११५। ६६ | सुगुणैः सेवितोपान्तो | १०१। ५४ |
| शङ्कुव्याकीर्णरङ्कुदुत | ११७। ८० | सतां समालोक्यतां | ३५। ४७ |
| शङ्खे पङ्केरुदल | ४१। १४ | सति द्राक्षाफले ह्रीरे | ११२। ५० |
| शशुनीरजदशो | १६। २ | सतां समालोक्यतां | ३५। ४७ |
| शब्दवद्भिरलंकारैः | ३५। ४३ | स दृश्यमानवदन | ३०। ६ |
| शर्वरीषु किल शिशिरीषु | ८१। २२ | स प्राप्तापि भोगान् | ११३। ५१ |
| शशी हर्षु लोभात् | ३५। ३८ | समरविहरदस्य | २१। ३१ |
| शान्ते मन्मथसंगरे | ५९। ४० | समर्थ्य हृदि दाहणां | ४८। १४ |
| शिरसि शिरसिजं दृशो | ५१। ३३ | समस्तापासांशो | ७१। १८ |
| शिरो व्याधुन्वत्याः | ७। ४० | समस्तावनीनाथमौले | २५। ५५ |
| शिव शिव सहस्रैव | ४३। २५ | समुत्कीर्णैः तन्व्या | ४३। ४ |
| शीतलारिव संत्रसं | ७५। २४ | समुन्नमदुरःस्थल | ३०। ७ |
| शीलानि ते चन्दन | ८५। १० | सर्वे लुण्ठितमुद्रैः | १७। ७ |
| शन्ये सन्ननि योजिता | ७४। १२ | सर्वस्य जन्तोर्भवति प्रमोदो | १०६। १ |
| शृगालशशदादल | ९७। ३४ | स वेदो निर्वेदमृति | ९२। ६३ |

| | | | |
|----------------------------|-----------------|------------------------|----------------|
| सहचरि परिपन्थिनं | पृ. श्लो. ७७।३७ | स्फूर्जद्भुजाविशतिकं | पृ. श्लो. ८६।२ |
| सहस्रनेत्रे प्रियगात्र | ५५।१६ | स्मरकम्पद्भुमो वाळे | २३।२ |
| साधारणतत्तुज्या | ९३।४ | खच्छाम्बरसच्छादित— | ७८।१ |
| सानन्दकन्दुकविहारविवी | ६५।३९ | खतो ददाति नो नीरं | १०५।८ |
| सानन्दमेव मकरन्द | ९७।३३ | खदेहघमौदकपिच्छले | ८२।३। |
| सामगायनपूतं मे | ८४।३ | खत्रे न क्षितिपावतंस | २७।६ |
| सारज्ञाक्ष्याः कुचकलश | ३६।३९ | खयं खगुणनिस्तारा | ११०।३ |
| सिंहः शिशुरपि निपतति | १०९।६१ | खल्लस्तु विद्रुमवनाथ | ९९।४ |
| सिन्धोः गुधांशुशकल | ६९।३ | खापे प्रियानन | ५०।२। |
| सीतामपास्य त्रपया | ८५।८ | खामोदवासितसमग्र | ९७।३ |
| मुखशाय्या ताम्बूल | ५२।४ | हसी वेत्ति पराग— | ९९।४ |
| मुदीर्धरेक्ष्वा-डिन्दा | ३५।४५ | हन्तानि संतापनिवृत्तये | ४०।१० |
| मुधामबोडपि ध्वरोध | ३४।३७ | हरकोधज्वालावलि | ३८।५८ |
| मुभापितरसाबलि | ११९।९३ | हरिपत्राम्बुका फुल | ७।३६ |
| मुभापितस्वाध्ययने | ९८।३७ | हसन्ती वा हसन्ती वा | ८०।१८ |
| मुमेरुशिखरप्रान्त | १०७।११ | हस इव भूतिमलिनो | ११४।५८ |
| सखलदंशुकमव्यवस्था— | ४६।१९ | हस्तस्वेदक्षपित इव | ५६।२९ |
| सखलित करकङ्कणं निशायां | ६।३४ | हस्ताम्भोजालिमात्र | २०।२७ |
| स्त्रन्य जातो न जग्राह | १०२।५९ | हस्ती वन्यः स्फटिक— | २८।७ |
| स्तब्धेऽर्धभे नरण | ५।३६ | हारस्तुन्दरति कङ्कण | ५७।२० |
| स्थगयति नयनास | ४०।३ | हारो नारेणितः कण्ठे | ४३।३ |
| स्थलकमलतरुणां | ८२।३१ | हा हन्त मानसस्ररः | ९८।४१ |
| स्थानं नास्ति क्षण नास्ति | ५२।३५ | हीनहृत्वा दध्यात्येव | १०८।१६ |
| स्थूलप्रावरणोऽतिवृत्त | ९१।६० | हृदयमाधयसे यदि | ४२।२४ |
| स्नातं वारिपु निर्मलेषु | ८।४५ | हृदि लग्नेन बाणेन | ११८।८। |
| स्नाताः प्रावृषि | २८।७३ | हे दारिद्र्य नमस्तुभ्य | ११३।५४ |
| स्निग्धालिङ्गसौहार्दा | १०७।८ | हेमन्तहिमनिस्पद | ७९।१० |
| स्पृष्टाकृष्टानिपिष्टोत्कर | २४।४८ | हे हेमन्त स्मरिष्यामि | ८०।१५ |
| स्पृष्टतरमटवीनां | २५।५६ | हिया सखीनां हरिरम्बुजा | ६३।२५ |
| स्फुरन्नुपाराशुमरीवि | ७२।२२ | | |